गोलीयरेखागणितम्

डॉ. भास्कर शर्मा 'श्रोत्रिय'

B-3

[illegible]

[illegible]

गोलीयरेखागणितम्

डॉ. भास्कर शर्मा 'श्रोत्रिय'
ज्योतिषाचार्य, एम.ए., पी-एच.डी.
प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष-ज्योतिष
राजकीय धूलेश्वर आचार्य संस्कृत महाविद्यालय,
मनोहरपुर, जयपुर

हंसा प्रकाशन, जयपुर

ISBN : 81-88257-01-X

प्रकाशक : हंसा प्रकाशन
57, नाटाणी भवन, मिश्रराजाजी का रास्ता,
चांदपोल बाजार, जयपुर-302 001

© : सर्वाधिकार सुरक्षित

संस्करण : प्रथम 2002

मूल्य : हंसा प्रकाशन रु.: 50.00

टाईप सैटिंग : आइडियल कम्प्यूटर सेन्टर
जौहरी बाजार, जयपुर

मुद्रक : शीतल प्रिन्टर्स, जयपुर

प्रस्तावना

भारतीय ज्ञान भण्डार की निगम, आगम और दिव्य नाम से प्रसिद्ध शतशः विधाओं के अन्तर्गत ज्योतिष विज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है। ऋग्वेद संहिता के (२/३/२२/१६४) में तथा तैत्तरीय ब्राह्मण के (२/४/६) में और इन्हीं मंत्रों के भाष्य में सायणाचार्य ने प्रणवरूपा एकपदी, व्याहृति ओर सावित्री रूपा द्विपदी, वेदचतुष्टयरूपा चतुष्पदी, षड् वेदाङ्ग, पुराण और धर्मशास्त्ररूपा अष्टपदी, मीमांसा, न्याय, सांख्य, योग, पाञ्चरात्र, पाशुपत, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद रूपा नवपदी और अनन्त विधाओं में ज्योतिर्विज्ञान का वर्णन प्रतिपादित किया है। छांदोग्योपनिषद् (७/१/२) में महर्षि नारद ने अपनी पठित विद्याओं में नक्षत्र विद्या (ज्योतिष), राशि विद्या (अंक गणित), गणित एवम् फलित ज्योतिष का भी वर्णन मिलता है। गणित अर्थात् अंक गणित, क्षेत्र गणित, बीज गणित आदि गणित ज्योतिष आद्य रूप में अवस्थित है। मुण्डकोपनिषद (१/५) में अपरा विद्या के रूप में चारों वेदों के साथ ही षडङ्ग में ज्योतिष की गणना की है। ज्योतिर्विज्ञान का उपयोग हमारे धार्मिक एवं व्यावहारिक कार्यों में सनातन काल से सतत होता आ रहा है।

ज्योतिर्विज्ञान के उद्देश्य की पूर्ति में भगवान नारद जी कहते हैं कि–

विनैतदखिलश्रौतस्मार्तकर्म न सिद्ध्यति।
तस्माज्जगद्धितायेदं ब्रह्मणा रचितं पुरा॥

अर्थात् इस ज्योतिष विज्ञान के बिना हमारे श्रौत और स्मार्त-कर्म सिद्ध नहीं हो सकते। इसलिये ब्रह्मा जी ने पूर्वकाल में इसकी रचना की। ज्योतिर्विज्ञान के बिना इन कर्मों की सिद्धि क्यों नहीं हो सकती। इस विषय में महर्षियों ने विशद वर्णन किया है। संक्षेपतः याजुष् ज्योतिष के तीसरे आर्चज्योतिष के छत्तीसवें श्लोक में तथा अन्त में पितामह सिद्धान्त के अन्तिम श्लोक में वर्णित है कि–

वेदास्तु यज्ञार्थमभिप्रवृत्ताः, कालानुपूर्वा विहिताश्च यज्ञाः।
तस्मादिदं काल विधानशास्त्रं, यो ज्योतिषं वेद स वेद सर्वम्॥

अर्थात् वेद तो विविध यज्ञानुष्ठानों के लिये प्रवृत्त है और जितने यज्ञ है उनका अनुष्ठान कालाधीन है अतःएव जो विद्वान काल विधानशास्त्र-

ज्योतिर्विज्ञान को जानता है वही यज्ञादि सब कुछ जानता है। ज्योतिर्विज्ञान के गौण रूप से भले ही अनेक उद्देश्य हों किन्तु मुख्य उद्देश्य है 'काल विधान' इसके बिना षोड़श संस्कार, तिथि, वार, योग और नक्षत्रों के सम्बन्ध से व्रतोत्सव तथा मुहूर्तादि विचार, प्रश्न, जातक एवं हायन (ताजिक) सम्बन्धी होरा विचार, शकुन, वायुपरीक्षण, सद्यःवृष्टि आदि के विचार ही नहीं हो सकते। इतना ही नहीं काल ज्ञान के बिना दर्श, पौर्णमास, चातुर्मास्य, अष्टका, विषुव, अयन, मास, ऋतु, गोल आदि कर्म सिद्ध नहीं हो सकेंगे। ज्योतिष विज्ञान का मुख्य उद्देश्य कालज्ञान है।

ज्योतिष विज्ञान के स्वरूप का विवेचन नारद संहिता में स्पष्ट है कि–

सिद्धान्त संहिता होरा रूप स्कन्धत्रयात्मकम्।
वेदस्य निर्मलं चक्षुर्ज्योतिः शास्त्रमनुत्तमम्॥

अर्थात् सिद्धान्त संहिता और होरा स्कन्धत्रयात्मकअत्युत्तम ज्योतिः शास्त्र वेद का निर्मल तंत्र है। भास्कराचार्य ने सिद्धान्त शिरोमणि ग्रन्थ के गणिताध्याय में सिद्धान्त का लक्षण इस प्रकार प्रतिपादित किया है–

त्रुट्यादि प्रलयान्तकालकलना मान प्रभेद क्रमात्-
च्चारश्च द्युसदां द्विधा च गणितं प्रश्नास्तथाचोत्तराः।
भूधिष्ण्येग्रहसंस्थितेश्च कथनं यन्त्रादि यत्रोच्यते,
सिद्धान्तः स उदाहृतोऽत्र गणितस्कन्धप्रबन्धे बुधैः॥

अर्थात् त्रुटि काल से लेकर प्रलय के अन्तकाल तक (त्रुटि, लीक्षक, प्राण, पल, विनाडी, नाडी, अहोरात्र, मास, ऋतु, अयन, वर्ष, चतुर्युग, स्वायम्भुवादि चौदह मनु और ब्राह्म दिन, रात्रि, कल्प) की गणना ब्राह्म दिव्य पैत्र्यादि नौ प्रकार के कालमान, सूर्यादि ग्रहों गति-युति, व्यक्त और अव्यक्त रूपात्मक दो प्रकार की गणित दिशा देश और काल सम्बन्धी प्रश्न एवं उत्तर, पृथ्वी ग्रह एवं नक्षत्रों के स्थान, क्रान्ति, शर, गोलादि यन्त्रनिर्माण विधि और उपयोग का जिसमें वर्णन हो, उस गणित शास्त्र को विद्वद्जन ज्योतिर्विज्ञान का सिद्धान्त स्कन्ध कहते हैं।

ज्योतिर्विज्ञान के संहिता स्कन्ध का वर्णन आचार्य वराह मिहिर ने महर्षियों के मतानुसार अपनी 'वृहत्संहिता' (१/२१) में विस्तार के साथ किया है । जिसका सारांश यह है कि सूर्यादि ग्रहों, विविध केतुओं– पुच्छल

ताराओं, नक्षत्रों, सप्तर्षि अगस्त्यादि ताराव्यूहों के स्थान, चार, योग, उदयास्तादि के द्वारा शुभाशुभादि का वर्णन तथा विविध उत्पातों शकुनों और उनके फलों के विचार और रत्न परीक्षा, पशु परीक्षादि के साथ विविध मुहूर्तों का वर्णन मानव जाति के सभी व्यावहारिक विषयों का वर्णन संहिता में रहता है। इसलिये ज्योतिः स्कन्ध का दूसरा नाम व्यवहार शास्त्र भी रखा गया है।

ज्योतिर्विज्ञान के तीसरे स्कन्ध के रूप में होरा स्कन्ध है। होरा स्कन्ध का लक्षण कश्यप के वचनानुसार 'होरारत्नम्' ग्रन्थ में निहित है जिसका सारांश यह है कि होरा स्कन्ध में राशि भेद, ग्रहयोनि, गर्भज्ञान, लग्न, आयु, दशा, अन्तर्दशा, अरिष्ट, कर्मजीव, राजयोग, नाभस, चन्द्र, द्विग्रह, प्रव्रज्यादि योग, राशि शील, दृष्टि, ग्रहभावफल, आश्रम और संकीर्ण योग, स्त्रीजातक, नष्टजातक, निर्याण तथा द्रेष्काणादि फलों का विचार– इन सब विषयों का वर्णन होता है। होरा स्कन्ध का दूसरा नाम 'जातक', अथवा यों कहें कि होरा स्कन्ध का प्रधान अंग जातक है। जन्मकाल के आधार पर जो शुभाशुभ फल का निर्णय करने वाला ग्रन्थ हो, उसे जातक कहते हैं। होरा का अर्थ सारावली (२/२) में 'अहोरात्र' शब्द के आदि अन्त के वर्णों को त्याग देने से 'होरा' शब्द बना है क्योंकि अहोरात्र सावन दिन के द्वारा ही ग्रहों के भगणादिकों का स्पष्टीकरण होता है ओर उन्हीं ग्रहों के द्वारा सभी फल विचार होते हैं अथवा लग्न का नाम होरा है तथा लग्नार्ध का नाम होरा है। जिसके द्वारा समस्त जातक सम्बन्धी फल-विचार होते हैं। इसी होरा स्कन्ध के द्वारा जन्म, वर्ष प्रश्नादि के इष्टकाल पर ग्रहभावादि का स्पष्टीकरण तथा दृष्टि, बल, दशा-अन्तर्दशादि की गणना और फलों का विचार होता है। इसीलिये इसे होरा, जातक, तथा हायन (ताजक) भी कहते हैं।

भारतीय ज्योतिर्विज्ञान में अर्थात् ज्योतिर्गणित में सर्वप्रथम परिकर्म, व्यवहार, शुल्व (रज्जु = क्षेत्रगणित) राशियों के वर्ग, घन, वर्गावर्ग, विकल्प आदि का समावेश किया गया है। ब्राह्मण साहित्य में बीज गणित मुख्य रूप से रैखिक ही थी। किसी भी वर्ग के भुज सहित आयत रूप में परिणमन की रैखिक विधि का शुल्व सूत्रों (८००-८०० ख्री.पू.) में वर्णन किया गया। समद्विबाहु, समलम्ब, चतुर्भुज आदि के आकार की यज्ञ

महावेदी होती थी। जिसका आधार ३०, भुज २४, उच्च (लम्ब) ३६ होता था। इस विषय में आचार्य लगध ने 'वेदाङ्ग ज्योतिष' नामक लघु ग्रन्थ की रचना की। इसी प्रकार त्रिलोक प्रज्ञप्ति, सूर्य प्रज्ञप्ति ज्योतिष्करण्डक आदि में अनेक गणितीय विचार है। अज्ञात राशि गणित भाग का बीज गणित के रूप में अलग से प्रतिपादन सर्वप्रथम ब्रह्मगुप्त ने किया तथा ब्राह्मस्फुट सिद्धान्त में बीजगणित के नाम पर उससे सम्बद्ध कुट्टकअध्याय के रूप में प्रतिपादित किया है।

भारतीय प्राचीन ज्योतिर्गणितज्ञों में सर्वप्रथम आर्यभट्ट (५१०ई.), ब्रह्मगुप्त (६२५ ई.), महावीराचार्य (८५० ई.) और भास्कराचार्य (११५० ई.) आदि थे दक्षिण कोण की त्रिकोण भुजाओं के सम्बन्ध में पिथागोरस सूत्र– $ए^2 = बी^2 + सी^2$ था यहाँ ए = कर्ण - (त्रिभुज में समकोण के संमुख की रेखा) के रूप प्रयोग किया। महावीराचार्य द्वारा रचित 'गणित सार संग्रह' के अनेक अध्यायों में ज्यामिति के प्रकार का निरूपण मिलता है। वर्तमान में संख्या ओर आकृति मुख्य दो धाराओं में गणित परिणत है। प्रथम अंक गणित, बीजगणित आदि आती है और दूसरी ज्यामिति (गोलीय रेखा गणितम्) है। ये दोनों विधि सत्रहवी शताब्दी से अपने स्वरूप में आज भी प्रतिष्ठित है। तत्कालीन शांक गणित में आयत, समकोण, त्रिभुज, समद्विबाहुत्रिभुज आदि के द्वारा क्षेत्रफल का आनयन था। बेबिलोन के अनुसार मिश्रदेश में भी अंक गणित का विकास था। उसी समय मिश्रदेश में परिधि एवं उसके व्यास की सूक्ष्म गणना की गई। पिथागोरस का सिद्धान्त कात्यायन शुल्व सूत्र (२/११) में मिलता है। मिश्रदेश की गणित का सिद्धान्त (समकोण त्रिभुज कर्ण वर्ग से सम्बद्ध) है और शुल्व सूत्र में (आयत कर्ण वर्ग से सम्बद्ध) है। चौथी शताब्दी के बाद भारतीय ज्योतिष में यवन ज्योतिष का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। आचार्य वराहमिहिर ने यवन देश की बारह राशियों के नाम उद्धृत किये। जैसे– क्रिय, तावुरु, जितुम, कुलीर, लेय, पाथोन, जूक, कौर्प्य, तौक्षिक, आकोकेर, हृद्रोग, अन्यभ। इस प्रकार मणित्थ और यवनाचार्य का उल्लेख किया गया है। शकसम्वत्सर के प्रवर्तक का यवनेश्वर स्फूर्जिध्वज के सम्बन्ध में वराहमिहिर के ग्रन्थ टीकाकार भट्टोत्पल ने प्रतिपादन किया। उसमें आपोक्लिम, हिबुक, त्रिकोण, जामित्र, पणकर, मेषूरण आदि यवन भाषी शब्दों का प्रयोग किया।

इस प्रकार यवनों का स्थिरत्व फलित ज्योतिष के बृहत्संहिता नामक ग्रंथ में वराहमिहिर ने सदा स्मरण किया–

म्लेच्छा हि यवनास्तेषु सम्यक् शास्त्रमिदं स्थितम्।

ऋषिवत् तेऽपि पूज्यन्ते किं पुनर्देवविद् द्विजः ॥

सिद्धान्त ज्योतिष में यवनों का प्रभाव परिलक्षित होता है, कुछ विद्वानों की मान्यता है कि रोमक सम्प्रदाय यवनों की गणना शैली का अनुसरण करता है।

क्षेत्रगणित, रेखागणित अथवा गोलीय रेखा गणित का प्रकार यवन देश में ज्यामेट्री रूप से विख्यात है। वहाँ जी तथा ज्या शब्द पृथिवी वाचक है, मैट्री अर्थात् मानवाचक है। इसी प्रकार 'ट्रिगनोमैट्री' त्रिकोण अर्थ द्योतक है। दोनों ही शब्द थोडे से परिवर्तन से संस्कृत भाषा के हो जाते हैं। ज्यॉ = ज्या, मेट्री अर्थात् मितिः ($\sqrt{}$मा+क्तिन्) ।इसी प्रकार ट्रिगोन = त्रिकोण, मेट्री अर्थात् मितिः। इस प्रकार कल्पना की गई ज्यामिति, भूमिति, अथवा त्रिकोणमिति। ब्राह्मस्फुट आदि सिद्धान्तों में तो अपरशनार्थक ज्या शब्द है। गणकचक्रचूडामणि आचार्य ब्रह्मगुप्त विरचित ब्रह्मस्फुट सिद्धान्त में क्षेत्र-व्यवहार, वृत्तक्षेत्रगणित, कुट्टक, शंकु छायादि ज्ञान, गोल, और ज्या आदि विषयों को समाहित कर रखा है। महावीराचार्य रचित 'गणितसार संग्रह' में ज्यामिति गणित का विपुल प्रभाव दिखाई देता है। इसमें क्षेत्र गणित व्यवहार, खात व्यवहार ओर छाया व्यवहार नामक अध्यायों को प्रस्तुत कर रखा है। यद्यपि ये ग्रंथ किसी के द्वारा अनूदित हो ऐसा नहीं कहा जा सकता। फिर भी गोलीय रेखा गणित आदि ग्रंथों के अध्ययन करने के बाद ये स्वतन्त्र रूप से लिखे गये हों, ऐसा मत समीचीन दृष्टिगोचर नहीं होता।

आचार्य श्री नीलाम्बर द्वारा विरचित 'गोलप्रकाश' (गोलीय रेखा गणित और चापीय त्रिकोण गणित) ग्रंथ ज्यामिति प्रभाव से लिखे गये हैं ऐसा जान पडता है। गोलीय रेखागणित का ज्ञान मिश्र देश से यवनों को प्राप्त हुआ। अरब देशीयों ने अनुवाद का कार्य किया। आठवी सदी में बगदाद में पुस्तकालय की प्रतिष्ठा हुई भारतीयों के ज्योति शास्त्रीय ग्रन्थों का अनुवाद मोहम्मद आदि विद्वानों द्वारा किया गया। उलूक वेग ने समरकन्द में विशाल वेधशाला का निर्माण किया और ग्रहों के वेध को उत्कृष्टता प्रदान की।

सत्रहवीं शताब्दी में जयपुर नगर के प्रतिष्ठापक महाराजा सवाई जयसिंह द्वितीय ने भारतीय, अरबीय, यूरोपीय ज्योतिष ग्रंथों की गणना के आधार पर नूतन प्रस्तरमयी वेधशालाओं का निर्माण किया। किन्तु गणित में दृक् साम्यता का अभाव होने के कारण सूक्ष्म गणित का अभाव रहा। तथा नवीन सारणियों का भी निर्माण कराया गया। उनकी सहायता से वेध करके 'सिद्धान्त सम्राट' नामक नवीन ग्रन्थ की रचना अपने विद्वान गुरु सम्राट् जगन्नाथ के द्वारा की। अलमिजस्ति अरबी ग्रन्थ का अनुवाद कर, 'सिन्टेक्सिस मैथेमेटिक' की रचना की गई अलमिजस्ति के विषय में सम्राट् जगन्नाथ ने लिखा है–

अरबीभाषया ग्रन्थो मिजस्ती नामकः स्थितः।
गणकानां सुबोधाय गीर्वाण्या प्रकटी कृतः॥

'युक्लिड' नामक अरबी ग्रंथ का अनुवाद संस्कृत भाषा में रेखागणित के नाम से सम्राट् जगन्नाथ ने किया। इस गणित सिद्धान्त का रेखा गणित नामकरण सर्वप्रथम जगन्नाथ सम्राट् द्वारा ही किया गया। गोलीय रेखागणित ग्रन्थ का अरबी भाषा से संस्कृत में अनुवाद कराने वाले सवाई जयसिंह द्वितीय की आज्ञा से पं. नयनसुखोपाध्याय द्वारा किया गया। तथा आचार्य नीलाम्बर झा विरचित गोलप्रकाश की गोलीय रेखागणित की रचना व्यवस्थित हुई। तथा जयपुर वास्तव्य म.म. सुधाकर द्विवेदी जी के द्वारा इस ग्रन्थ विशेषोक्त गोलीय रेखागणित की रचना हुई। तथा चन्द्रशेखर झा एवं मीठालाल द्वारा संस्कृत टीकाकार्य हुआ।

इस ग्रन्थ में अठारह क्षेत्र तथा विशेषोक्त गोलीय रेखा गणित के २१ सूत्र प्रतिज्ञा रूप में है। दुर्लभ ग्रन्थ के दुरूह स्थलों एवं गूढ़ रहस्यों को चित्रादि के माध्यम से 'शची' नामक हिन्दी टीका द्वारा सुगम किया है।

कार्य सम्पादन में पुरोवाक् डॉ. वासुदेव शर्मा रीडर केन्द्रीय संस्कृत विद्यापीठ जम्मू, तथा भूमिका पं. शिवचरण शास्त्री जयपुर एवम् शब्दद्वय डॉ. विनोद शास्त्री निदेशक, राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर का आभारी हूँ जिसके द्वारा ग्रन्थ गौरवता को प्राप्त हुआ। आशा है सभी इससे लाभान्वित होंगें।

भवन्निष्ठ

डॉ. भास्कर शर्मा 'श्रोत्रिय'

भूमिका:

भारतीय ज्योतिष शास्त्र वेदमूलक है। वेदाङ्गों में ज्योतिष शास्त्र को प्रमुख अंग के रूप में स्वीकार किया गया है। **"सूर्याच्चन्द्रमसौ धाता यथा पूर्वमकल्पयत्"** जैसे वेद वाक्यों से इसकी परिपुष्टि होती है। ऋषिगण उन्मुक्त वातावरण और आकाश के नीचे वनों में निवास करते थे और वहाँ प्रकृति के साहचर्य में आकाश देखते थे यज्ञ-यागादि किया करते थे। इन दोनों के कारण ही ज्योतिष शास्त्र के संरचना की कल्पना हुई। विषय वेध और कलन दोनों भाव एक साथ प्रादुर्भूत हुए। इसके विकास में बहुत समय लगा। वैदिक काल के और वेदांग काल के उपरान्त यह देखने को मिलता है। इस शास्त्र के तीन भाग मिलते हैं। जिनके कारण ही यह शास्त्र त्रिस्कन्ध ज्योतिष कहलाता है। इस शास्त्र के विकास का स्वरूप ज्योतिष शास्त्र के इतिहास में सिद्धान्त काल को स्वर्णिम युग कहा जाय तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। आर्यभट्ट, ब्रह्मगुप्त, लल्ल, वराहमिहिर, भास्कराचार्य जैसे आचार्यों ने इसके सिद्धान्त स्वरूप की संरचना एवम् विशद व्याख्या की।

सिद्धान्त ज्योतिष का महत्व तीनों स्कन्धों में सर्वाधिक है ओर यही इस शास्त्र की आधारशिला है। यही कारण है कि भास्कराचार्य जैसे विद्वानों ने इसकी महिमा **"दशदिनकृतपापं हन्तिसिद्धान्त वेत्ता"** वाक्य से की है। सिद्धान्त में नभो मण्डल के ज्योतिर्पिण्ड इस मण्डल में व्याप्त पिण्डों के स्थान, दिशा, देश, गति, प्रकाश, दूरी और इनकी भूमण्डल पर स्थित वातावरण एवम् जन-जन पर प्रभाव की परिकल्पना इनकी छाया से गति स्थिति का दिग्दर्शन तथा गणना द्वारा भी इससे प्रगट करना मुख्य ध्येय रहा है। इस शास्त्र में गणना के प्राथमिक खण्ड अंक गणित (पाटीगणित) रेखा गणित, बीज गणित ओर त्रिकोणमिति आदि हैं। इसमें भी गोल पर प्रकाश डालने वाले गोल गणना के सहयोगी ग्रन्थ गोलप्रकाश, गोलीय रेखागणित, वास्तवचन्द्र श्रृंगोन्नति, चापीय त्रिकोणगणित जैसे बनें। पूर्वाचार्य आर्यभट्ट से आरम्भ कर भास्कराचार्य पर्यन्त जो परम्परा बनी उसके विकसित स्वरूप में

हमारे सामने प्रत्यक्ष वेध से प्राप्त ग्रह और कल्पादि, युगादि से गणना किये ग्रहों का सामञ्जस्य समन्वय अहर्गण से सम्बन्ध जोडते हुए तथा उसमे मंद-फलादि संस्कार कुछ देशान्तरादि फल संस्कारों का ग्रह स्पष्ट प्रकरण, दिग्देश काल के निर्णय का एक प्रकरण जो इसकी रीढ़ की हड्डी है जिसे त्रिप्रश्नाधिकार नाम दिया गया है विहित है। इसके अतिरिक्त दोनों ग्रहण, उदयास्त, पातादि पर विचार किया गया है। इस प्रकार सिद्धान्त के विकसित तन्त्र का स्वरूप सामने प्रतिष्ठित होता है।

तीसरे पुष्प के स्वरूप में भुवनकोश, गोल एवम् यन्त्र तथा त्रिकोणमितीय ज्यासाधन के अध्याय प्रमुख कहे जा सकते हैं। तत्पश्चात् परवर्ती ग्रन्थकारों ने जिसे पूर्वोत्तर काल कह सकते हैं में गणेश दैवज्ञ, केशव दैवज्ञ, जैसे आचार्यों के करण ग्रन्थों की संरचना और उसमें भी सामान्य ज्योतिषि के लिए भी सुलभ "ज्याचापकर्मरहितं सुलघु प्रकारं" वचनों से ज्योतिर्विदों में व्यापक जनमत प्राप्त कर शिरोमणि यश प्राप्त किया। ग्रह-लाघव के पश्चात् नवीन ग्रहलाघव के रूप में बापू श्रीमद्वेंकटेशदेव केतकर का 'केतकीग्रहगणितम्' ग्रन्थ आधुनिक भारतीय दृश्य गणित के रूप में पंचागादि निर्माण के लिए उपादेय ग्रन्थ आज भी प्रत्यक्षता प्रदान कर रहा है। इससे कहा जा सकता है कि आचार्य ने दिमाग के कठिन उत्तर को सरल रूप में प्रगट करने की चेष्टा की और उसने सैकडों वर्ष ज्योतिष जगत का प्रतिनिधित्व किया।

उत्तरवर्ती काल में जिन बडे विद्वानों का ओर उनके ग्रन्थों का व्यापक यश रहा है उनमें कमलाकर भट्ट को प्रमुख सिद्धान्त का आचार्य कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त महामहोपाध्याय पं. सुधाकर द्विवेदी, बापूदेव शास्त्री, नीलाम्बर झा जैसे काशी विश्वनाथ के कृपापात्र और गंगा तट के पुण्य फल प्राप्तकर्ता आचार्यों के कठिनी पर नाम गिनाये जा सकते हैं। जिनकी गणित, गोल और सिद्धान्त पर ग्रन्थ प्राप्त होते हैं। इसी युग में भारतीय ज्योतिष के प्रमुख वेत्ता और ज्योतिष के प्रेमी जयपुर के महाराजा सवाई जयसिंह द्वितीय का नाम गिनाया जा सकता है जिन्होंने ज्योतिष शास्त्र के प्रबुद्ध और प्रगाढ़ पण्डित दैवज्ञ जगन्नाथ सम्राट्, नयनसुखोपाध्याय, केवलराम आदि विद्वानों के सहयोग से अपनी कल्पना को

वेधशाला के रूप में नभो मण्डल को भूमण्डल पर प्रत्यक्ष रूप में उतारा। दूसरे शब्दों में भास्कर के गोल स्वरूप को गोलप्रकाश में परिणत कर दिया माना जा सकता है।

इस प्रकार इस शास्त्र के गणित और गोलीय ग्रन्थ गुरु परम्परा से पढाये जा रहे थे। अब उन्हें विद्यालय, कॉलेज और विश्वविद्यालय स्तर पर धीरे-धीरे छात्रों को पाठ्यक्रम के रूप में निर्धारित अंशों के माध्यम से प्रस्तुत कर अध्यापन तथा अनुशीलन कराया जा रहा है।

ग्रन्थ कम मात्रा में प्रकाशित हो रहे हैं परिणाम यह है कि पाठ्यसामग्री के अभाव में छात्रों को इतस्ततः भटकना पड़ता है और प्रबुद्ध आचार्यों को भी काठिन्य की अनुभूति होती है। इस अभाव को दूर करने के लिए तथा इन मुख्य धाराओं को अनवरत बहने के लिए यह प्रकाशित होने आवश्यक हैं। इस अनुभूति को इन ग्रन्थों के प्रकाशन का स्वरूप दिया गया है। इसी श्रृंखला में गोलीय रेखागणित प्रकाशित की गई है ताकि इसकी गणित क्रियायें और गोल स्वरूप तथा इसके अनुमान तिरोहित ना हो जाये।

इस अभाव की पूर्ति करने के लिए तथा शोध छात्रों को सुबोध एवं सुगम्य बनाने हेतु सरल भाषा में अनुवाद करने का कार्य डॉ. भास्कर श्रोत्रिय द्वारा जो किया गया है तदर्थ मैं राजकीय आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, मनोहरपुर के प्रोफेसर एवं ज्योतिष विभागाध्यक्ष डॉ. भास्कर श्रोत्रिय को मंगलकामना के साथ हार्दिक बधाई देता हूँ।

– पं. शिवचरण शास्त्री
ज्योतिषाचार्य, साहित्याचार्य, एम.ए.,
उपाध्यक्ष– राज. ज्योतिष परिषद एवं शोध संस्थान, जयपुर
महासचिव– व्यास बालाबक्ष शोध संस्थान, जयपुर
ज्योतिषसम्राट, ज्योतिषमार्तण्ड, राज्यस्तरीय सम्मान प्राप्त शिरोमणि।

शब्दद्वय

दृष्टान्त एवावनिभ ग्रहाणां संस्थानमान प्रतिपादनार्थम्,
गोलस्मृतः क्षेत्रविशेष एष प्राज्ञैरतः स्याद्गणितेन गम्यः ।।

ज्योतिषशास्त्र के मूर्धन्य आचार्य सिद्धान्त शिरोमणि के प्रणेता भास्कराचार्य ने इस युक्तियुक्त गोल स्वरूप में वर्णन किया है कि प्रत्यक्षादि प्रमाण से भूनक्षत्र ओर ग्रहों की स्थिति स्वरूप निर्णय निरूपण के लिए प्राज्ञ गणितज्ञों से बाँस एवं शलाकाओं से निर्मित इस दृष्टान्तीभूत गोल ज्ञान से क्षेत्र व्यवहार, बीजगणित, त्रैकोणमितिक प्रभृति गणितों से यह ग्रहगोल जाना जा सकता है। स्पष्ट ही है कि ग्रहादिकों का ज्ञान गोल निरूपणात्मक सिद्ध ज्ञान के अधीन होता है। बिना गोल ज्ञान के ग्रहगणित की उपपत्ति का बोध होना सम्भव नहीं है।

डॉ. भास्कर शर्मा कृत नीलाम्बर झा प्रणीत गोलीय रेखागणित की हिन्दी टीका वर्तमान में बहुत ही उपादेय है। नीलाम्बर झा ने पाश्चात्य पद्धति के अनुसार संस्कृत भाषा में गोलप्रकाश नामक ग्रन्थ की रचना की थी जिसे शक संवत् १७९३ में काशी में बापूदेव शास्त्री ने छपवाया था। इसके प्रमुख पाँच अध्याय ज्योत्पत्ति, त्रिकोणमितिसिद्धान्त, चापीयरेखागणितसिद्धान्त, चापीयत्रिकोणमितिसिद्धान्त एवं प्रश्न अध्याय है। अब तक संस्कृत जानने वाले विद्वान ही इसका लाभ उठा पा रहे थे। डॉ. भास्कर शर्मा ने इस बहुउपयोगी ग्रन्थ की हिन्दी टीका करके ज्योतिष शास्त्र में गोलीय रेखागणित पढने वाले विद्यार्थियों के लिए भाषाटीका के द्वारा बहुत सरल एवं बोधगम्य बना दिया है।

गोलीय रेखागणित के क्षेत्रों को भी डॉ. शर्मा ने प्रस्तुत किया है जिससे इनके वैदुष्य की झलक स्पष्ट दिखाई देती है। डॉ. भास्कर शर्मा कृत शची नामक हिन्दी टीका के इस ग्रन्थ का उपयोग स्नातक एवं स्नातकोत्तर कक्षाओं के विद्यार्थियों एवं शोधार्थियों के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध होगा। इस महान कार्य के लिए डॉ. शर्मा अनेकशः साधुवाद के पात्र हैं।

सादर

– डॉ. विनोद शास्त्री
निदेशक
राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर

पुरोवाक्

भारतीय ''ज्योतिष शास्त्र'' वेदाङ्गों में नेत्राङ्ग रूप में व्यवस्थित है।

''वेदस्य निर्मलं चक्षुः ज्योतिषशास्त्रमकल्मषम्
विनैतदखिलं श्रोतम् स्मार्तम् कर्म न सिद्ध्यति ॥''

नेत्र का मुख्य कर्म है 'दर्शन'। यह दर्शन जब त्रिकाल दर्शन की योग्यता प्राप्त कर भूत भविष्य वर्तमान का सम्यक् परिज्ञान करते हुए शुभाशुभ काल विवेक के योग्य बन जाता है तब प्राणिमात्र के लिये कल्याण का मार्ग प्रशस्त करता है। इस प्रकार त्रिकाल दर्शन का मुख्य स्रोत ''ज्योतिष'' भी त्रिस्कन्धात्मक है आचार्य वराहमिहिर कहते हैं–

ज्योतिषशास्त्रमनेक भेद विषयम् स्कन्धत्रयाधिष्ठितम्,
तत्कार्स्न्योपनयस्य नाम मुनिभिः संकीर्त्यते संहिता।
स्कन्धेऽस्मिन् गणितेन या ग्रहगतिस्तन्त्राभिधानस्त्वसौ
होराऽन्योङ्गविनिश्चयश्च कथितस्कन्धस्तृतीयोऽपरः॥

''बृहत्संहिता'' ग्रन्थ का यह वाक्य अनेक भेदों में एवम् विषयों में परिव्याप्त ''ज्योतिष'' को ''संहिता'' ''तन्त्र'' तथा ''होरा'' स्कन्ध में अधिष्ठित स्वीकार करता है। गणित की विभिन्न विधाओं में ग्रहगति का आनयन अथवा ग्रहसाधन विधि की प्रधानता जिस स्कन्ध में हो वह तन्त्र स्कन्ध ही आज का सिद्धान्त ज्योतिष है। गणित को जाने बिना ग्रहसाधन सम्भव नहीं है। अतएव भारतीय ज्योतिष के सिद्धान्त वेत्ताओं एवम् सिद्धान्त संस्थापकों ने ज्योतिष शास्त्र फल को आदेश स्वीकार कर उसे क्रमशः लग्न, स्पष्टग्रह और अन्त में गोल तथा गणित के अधीन बताकर गोलीय गणित को ज्योतिष का मुख्य आधार स्वीकार करते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा है–

''ज्योतिष शास्त्रफलम् पुराणगणकैरादेश इत्युच्यते
नूनम् लग्न बलाश्रितः पुनरयं तत्स्पष्टखेटाश्रयम्।
ते गोलाश्रयिणोऽन्तरेण गणितम् गोलोऽपि न ज्ञायते
तस्माद्यो गणितं न वेत्ति स कथम् गोलादिकम् ज्ञास्यति॥''

आचार्य भास्कर के सिद्धान्त शिरोमणि ग्रन्थ में गोलप्रशंसा का यह वचन ज्योतिष शास्त्रीय फल को क्रमशः लग्नबल, खेटाश्रयीभूत एवम्

गोलाश्रित स्वीकार करते हुए अन्त में गोलीय रेखागणित, गोलीय त्रिकोण-मिति एवम् गोलीय अन्यान्य गणित को महत्त्वपूर्ण स्वीकार करते हुए बिना गोलीय गणित के गोलज्ञान की अपूर्णता का संकेत करता है। 'गोल' ही ज्योतिष का मूल आधार है क्योंकि–

दृष्टान्त एवावनिभग्रहाणां संस्थानमान प्रतिपादनार्थम्।
गोलः स्मृतः क्षेत्र विशेष एष प्राज्ञैरतः स्याद् गणितेन गम्यः ॥

गोल क्षेत्र विशेष (नक्षत्रगोल, ग्रहगोल, खगोल, भूगोल) आदि समस्त गोल विधा गोलीय गणित (उसमें भी गोलीय रेखागणित एवम् चापीय त्रिकोण-गणित) को जाने बिना अगम्य है। भास्कराचार्य ने "द्विविध गणित-मुक्तम् व्यक्तमव्यक्तयुक्तम् तदवगमन निष्ठः" यह कहकर गणित की सभी शाखाओं के अध्ययन पर विशेष बल दिया है।

प्राचीन दैवज्ञों की इसी परम्परा को दृष्टिंगत रखते हुए संस्कृत भाषानिबद्ध झा प्रणीत गोलीय रेखागणित को संगृहीत कर ज्योतिषाध्येताओं को सरलता से गोलीय ज्ञान हेतु गोलीय रेखागणित की हिन्दी भाषा टीका का कार्य जयपुर नगर के प्रख्यात परम्परागत ज्योतिष विद्वान डॉ. श्री भास्कर शर्मा (श्रोत्रिय) द्वारा किया गया है यह जानकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हुआ। वस्तुतः ज्योतिष के छात्रों के लिये संस्कृत के गणितीय ज्योतिष ग्रन्थों के हिन्दी टीका में उपलब्धि की आवश्यकता बहुत समय से अनुभव की जा रही थी।

श्री भास्कर शर्मा जी ने केतकी ग्रहगणितम्, प्रासाद मण्डनं जैसे सिद्धान्त ग्रन्थों की टीका कर तथा प्रस्तर वेधशाला नामक महनीय ग्रन्थ की रचना करने पश्चात् गोलीय रेखागणितं ग्रन्थ का कार्य पूर्ण किया है। अतः मैं उनको बारम्बार हार्दिक शुभकामनाऐं देते हुए आशा करूंगा कि भारतीय सिद्धान्त ज्योतिष एवम् गणित ज्योतिष के अन्य ग्रन्थों की भाषा टीका के बारे में वे निरन्तर प्रयत्नशील रहेंगे। इस ही आशा एवम् शुभकामना के साथ आपका–

— **डॉ. वासुदेव शर्मा**
रीडर एवम् ज्योतिष विभागाध्यक्ष,
श्री रणवीर केन्द्रीय संस्कृत-
विद्यापीठ, जम्मूतवी

मोक्षदाएकादशी
दिनांक– २६.१२.२००१

॥ श्रीसर्वेश्वरो विजयते ॥

गोलप्रकाशस्य

गोलीयरेखागणितम्

मङ्गलाचरणम्

इन्द्राद्या न पदं विदन्ति ऋषयो ध्यायन्ति यं सर्वदा,
यत् तत्वं न विदुः सुरासुरगणाः स्रष्टुश्च यः कारणम्।
शास्त्रारण्य विहारिणोऽपि विबुधा जानन्ति नो यं हरिम्,
सर्वार्थस्य प्रदर्शकं विभुममुं सर्वेश्वरं नौम्यहम् ॥

श्रीमेदिनीभरनिवारणसाभिलाषं गोपीमुखाब्जरसपानसदाभिलाषम्।
सूर्य्यात्मजातटपरिक्रमणाभिलाषं वन्दामहे विनमतां सफलाभिलाषम् ॥१॥
नत्वा गुरूणां चरणारविन्दं कृत्वा तदीयां हृदये सदुक्तिम्।
गोलीयरेखागणिते तनोमि नीलाम्बरीये, सुगमां सुटीकाम् ॥२॥

अथ— गणकचक्रचूड़ामणिस्तत्रभवान्नीलाम्बरो मैथिलो विघ्नविनाशकतया चिकीर्षितस्य गोलीयरेखागणितस्य निर्विघ्नपरिसमाप्तये "आशीर्नमस्क्रिया वस्तुनिर्देशो वापि" इत्याद्यलङ्कारिकवचनप्रामाण्येनाऽत्र श्रीकृष्णाभिवन्दनरूपं मङ्गलमाचरति—

मनोनुकूले यमुनासुकूले गोपीदुकूलेन विनोदमानम्।
गतं कदम्बे[1] सुखमाकदम्बे सतां कदं वेणुधरं भजामि ॥१॥

मनोनुकूल इति। मनोऽनुकूले=चित्तानुरूपे यमुनासुकूले=यमुनायाः सुन्दरतटे गोपीदुकूलेन=बल्लवीनां वस्त्रेण विनोदमानं=हर्षयुक्तम्। सुखं च माचेति सुखमे=सुखश्रियौ ('मा च लक्ष्मी प्रकीर्त्तिता' इत्येकाक्षरकोषः) तयोः कदम्बं संहतिर्यस्मिन् तस्मिन् कदम्बे=नीपवृक्षे गतं=प्राप्तम्। ('कदम्बं निकुरम्बे स्यान्नीप-सर्षपयोः पुमान्' इति मेदिनी) सतां=साधूनां कं=सुखं ददातीति

---

१. अत्र 'सुषमाकदम्बे' इति पाठान्तरम्। एव सत "सुषमायाः परमशोभायाः कदम्बं संहतिर्यस्मिन् तस्मिन्" इति व्याख्यानं कार्यम् "सुषमा परमा शोभा" इत्यमरः।

कदस्तम् ('सुखशीर्षजलेषु कम्' इति मेदिनी) वेणुधरं=वंशीधरं श्रीकृष्णं भजामि=उपासयामि 'अहम्' इति शेषः। 'भज्' धातोर्लटि उत्तमपुरुषैकवचने रूपम्॥१॥

मङ्गलाचरणः भाषार्थः—

मन के अनुरूप यमुना के सुन्दर तट पर गोपियों के वस्त्र से विनोद करने वाले, सुख और लक्ष्मी के समूह से युक्त कदम्ब के वृक्ष पर विराजमान सज्जनों को सुख देने वाले वंशीधर श्री कृष्ण भगवान की मैं उपासना करता हूँ।

अथ– "यावत्प्रयोजनं नोक्तं तावत्तत् केन गृह्यते" "प्रयोजनमनुद्दिश्य न मन्दोऽपि प्रवर्तते" इत्यादि प्रमाणेनाऽत्रात्मनः कर्तृत्वमभिधेयस्य गोलीयरेखागणितस्य च प्रयोजनमुपक्षिपति—

नीलाम्बरो मैथिलभूसुरोऽहं सिद्धान्तसम्भ्रान्तनिरस्तशङ्कम्।
गोलस्वरुपावगमप्रकारं गोलीयरेखागणितं प्रवक्ष्ये ॥२॥

नीलाम्बर इति। मैथिलभूसुरो=मैथिलब्राह्मणोऽहं नीलाम्बरः सिद्धान्ते सम्भ्रान्तानां=भ्रान्तियुक्तानां निरस्ता=नष्टाः शङ्का यस्मात्तथोक्तं तथा गोलस्वरुपस्यावगमो=ज्ञानं येभ्यस्ते तादृशाः=प्रकाराः सन्ति यस्मिन् तत्तथोक्तं गोलीयरेखागणितं प्रवक्ष्ये=कथयिष्ये ॥२॥

ग्रन्थारम्भ-प्रयोजनः—

भाषार्थः—

मैं मैथिल ब्राह्मण नीलाम्बर सिद्धान्तों में भ्रांतियुक्त शंकाओं का निवारण करते हुए गोलस्वरुपीय विविध ज्ञान के अवबोधक रुपी गोलीयरेखागणित का प्रतिपादन करता हूँ।

तत्रादौ गोलरेखागणितस्य परिभाषाः—

(१) अर्धवृत्तं स्वव्यासरेखोपरि भ्राम्यमाणं गोलमुत्पादयति। स्पष्टम्।

भाषार्थः—

सर्वप्रथम गोलरेखागणित की परिभाषा—

अर्धवृत्त अपनीव्यास रेखा पर घुमाते हुए गोल को बनाता है।

स्वव्यासोपरि निजव्यासरेखोपरि भ्राम्यमाणं प्रचाल्यमाणंअर्धवृत्तं

वृत्तार्धभागो गोलमुत्पादयति रचयति। अर्थाद्यत् किमपि वृत्तार्धं स्वव्यास-रेखोपरि भ्राम्यमाणं सद्गोलं रचयति। यथा ऊर्ध्वाधरसूत्रनिजव्यासरेखोपरि ऊर्ध्वाधः खस्वस्तिकान्तर्गतस्य पूर्वापरवृत्तचापभागस्य भ्रामणेन गोलः सञ्जायते। भ्रमणावसरे तत् पूर्वापरवृत्तं कोणवृत्तयाम्योरवृत्तदृग्वृत्तानुकारं भवद्गोलाकारं दर्शयति।

(२) तस्याऽर्धवृत्तस्य केन्द्रं गोलपृष्ठस्थितसर्वबिन्दुत-स्तुल्यान्तरगतं भवति। अतएव तस्यार्धवृत्तस्य केन्द्रं गोलकेन्द्रं भवति। स्पष्टमेव।

भाषार्थः—

उस अर्धवृत्त के केन्द्र को गोलपृष्ठ में स्थित सर्व बिन्दु से तुल्य अन्तर पर गया हुआ होता है। इसलिये उस अर्धवृत्त का केन्द्र "गोलकेन्द्र" होता है।

स्वव्यासोपरि भ्राम्यमाणस्यार्धवृत्तस्य केन्द्रं मध्यबिन्दुः स्वव्यासार्धचिह्ने भवति। तथा च तदेवार्धवृत्तं निजव्यासोपरि भ्रमद्गोलाकारमुत्पादयति। अतो गोलपृष्ठीयतत्तदाकाररूपसर्ववृत्तानां केन्द्रमर्धवृत्तकेन्द्रमेव। तेन गोलपृष्ठीय-प्रत्येकबिन्दुतस्तत्केन्द्रं तुल्यान्तरम्। तुल्यान्तरत्वाच्च तत्केन्द्रं गोलकेन्द्रमुच्यते।

(३) येषां वृत्तानां धरातलं गोलकेन्द्रं भित्वा गच्छति तन्महद्वृत्तम्। अन्यल्लघुवृत्तम्। स्पष्टार्थम्।

भाषार्थः—

जिन वृत्तों को धरातल "गोल केन्द्र को" भेदन कर जाता है उसे महद्वृत्त कहते हैं। अन्य "लघुवृत्त संज्ञक" कहे जाते हैं।

लघुवृत्तानां गर्भकेन्द्रं गोलकेन्द्राद्भिन्नं तेन लघुवृत्तानां व्यासार्धस्त्रिज्यातो लघुः। व्यासस्य लघुत्वात्तल्लघुवृत्तमिति स्पष्टम्। गोले येषां वृत्तानां व्यासार्धस्त्रिज्यामितस्तानि महद्वृत्तानि। अतस्तद्वृत्तानि गोलकेन्द्रं भित्वा गच्छन्त्येव।

(४) गोलवृत्तक्षेत्रलम्बरेखा गोलकेन्द्रगामिनी गोलोभयप्रान्तयोर्लग्ना तस्य गोलवृत्तस्य याम्योत्तररेखा।

भाषार्थः—

गोलवृत्तक्षेत्र लम्बरेखा गोल केन्द्र में जानेवाली गोल के दोनों छोर

(किनारों) में लगकर उस गोलवृत्तकी "दक्षिणोत्तर रेखा" कही जाती है। जैसे किसी गोल में गोलकेन्द्र से अहोरात्रवृत्त के धरातल में की गई लम्बरेखा ध्रुवसूत्र नाम के उस अहोरात्र वृत्त की "दक्षिणोत्तर रेखा" हो सकती है ऐसा समझें।

गोलीयवृत्तधरातले तत्केन्द्रबिन्दुतः कृता लम्बरेखा तद्वृत्तस्य याम्योत्तरारेखा कथ्यते। यथा पूर्वापरवृत्ते भूकेन्द्रबिन्दौ कृता लम्बरेखासमसूत्राभिधा पूर्वापरवृत्तस्य याम्योत्तरा रेखा व्यपदिश्यते।

यथा गोले गोलकेन्द्रादहोरात्रवृत्तधरातले कृता लम्बरेखा ध्रुवसूत्राभिधा तस्याहोरात्रवृत्तस्य याम्योत्तररेखा भवितुमर्हतीत्येवं सर्वत्रेति।

(५) तौ च गोलोभयप्रान्तौ वृत्तस्य ध्रुवबिन्दू पृष्ठकेन्द्रे वा स्याताम्। स्पष्टमेव।

भाषार्थः—

और गोल के दोनों छोर(किनारे) वृत्त के ध्रुव बिन्दु अथवा पृष्ठ केन्द्र बिन्दू पर होते हैं।

गतपरिभाषया निर्णिता या याम्योत्तरा रेखा सा गोलोभयपार्श्वे यत्र स्थानद्वये संलग्ना तत्स्थानद्वयं याम्योत्तरारेखाधारवृत्तस्य ध्रुवबिन्दू, अर्थात्तद्वृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्रस्थाने। पृष्ठीयकेन्द्रबिन्दुद्वयतो नवत्यंशेन कृतं वृत्तं तदेव स्यात्। अतो वृत्तस्थप्रत्येकबिन्दुतः पृष्ठीयकेन्द्रबिन्दुस्तुल्यान्तरितः। यथा समस्थानरूपपृष्ठीय केन्द्रात् पूर्वापरवृत्तम्।

(६) गोलपृष्ठे बृहद्वृत्तस्य चापोभयप्रान्तौ बिन्दू तदन्तरं बिन्द्वोर्दूरत्वम्।

भाषार्थः—

गोलपृष्ठ पर बृहद्वृत्त के चाप के दोनों किनारों का बिन्दु और चाप द्वय के अन्तर का बिन्दु दूर होता है।

गोलोपरि कस्मिंश्चिन्महद्वृत्ते बिन्दुद्वयान्तर्गतचापमानमेव बिन्दुद्वयस्यान्तरं भवति। यथा गोले खमध्यध्रुवस्थानयोर्याम्योत्तरे वृत्तेऽन्तरं लम्बांशाः। त एव खमध्यध्रुवस्थानरूपबिन्दुद्वयस्यान्तरचापमानम्।

गोलपृष्ठे बिन्दुद्वयान्तरं तद्बिन्दुद्वयगतमहद्वृत्ते बिन्दुद्वयान्तर्गतचापमानमेव-

ज्ञेयमिति [1] यथा गोले खमध्यग्रहस्थानरूपबिन्दुद्वयान्तरं खमध्यग्रहयोरुपरिगत-दृग्वृत्तरूपे महद्वृत्ते खमध्याद्ग्रहावधि नतांशसमं भवितुमर्हतीति।

(७) द्वयोर्बृहद्वृत्तचापयोः सम्पातेन गोलपृष्ठे गोलकोणो भवति स च तदीयक्षेत्रयोर्नमनेन मापितो भवति।

भाषार्थः—

दो बृहद्वृत्तों के चाप के सम्पात से गोलपृष्ठ पर गोल-कोण होता है; और वह उस क्षेत्र के झुकने से समान होता है।

गोलोपरि महद्वृत्तयो सम्पातेन यो गोलकोणो भवति स कोणस्तन्महद्वृत्तद्वयसम्पातान्नवत्यंशेन कृतवृत्ते महद्वृत्तद्वयान्तर्गतचापमानेन मापितो भवति। अर्थात्तत्समो भवति। यथा गोले पूर्वस्वस्तिकबिन्दौ क्षितिजोन्मण्डलाभ्यामुत्पन्नकोणो याम्योत्तरे समस्थानध्रुवस्थानबिन्दुद्वयान्तर्गतेन चापेन समो भवति।

अत्र गोलपृष्ठे महद्वृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणमानं तयोर्वृत्तयोर्धरातलोत्पन्न-कोणेन समानं भवतीति निष्पन्नोऽर्थः। [2]

(८) त्रिभिस्त्रिज्यावृत्तचापैरावृतं गोलपृष्ठोपरि यत् क्षेत्रं तच्च गोलत्रिकोणसंज्ञम्। तच्चापानि तस्य क्षेत्रस्य भुजाः स्युः, तानि प्रत्येकं खाष्ठकुभागेभ्योऽल्पानि भवन्ति।

भाषार्थः—

तीन त्रिज्यावृत्त चापों से आवृत्त गोलपृष्ठ पर जो क्षेत्र है वह "गोलत्रिकोणसंज्ञक" है। उसके चाप उस क्षेत्र की भुजाएं होती हैं। वे प्रत्येक १८०° (अंश) से अल्प (कम) होती हैं।

गोलोपरि त्रिभिर्महद्वृत्तैरावृतं गोलत्रिकोणं भवति। तत्र तद्गोल-त्रिकोणस्य प्रत्येकभुजमानं षड्राशितः स्वल्पम्। यथा क्रान्तिवृत्तग्रहगत-

---

१. गोलीयपृष्ठे भदलाल्पबिन्दुद्वये सुशक्तं वलयं विधेयम्।
चेत्तजयोर्मण्डलयोरलघ्वो सपातजातं वलयं त्वभीष्टम्॥
अत्रोपपत्तिरपि स्वस्वपृष्ठकेन्द्रस्य वृत्तं प्रत्येकबिन्दुतो नवत्यंशान्तरे स्थितत्वाद्वृत्तयोः समपातजवृत्ते तयोः पृष्ठीयकेन्द्रगतमेवेति स्फुटतरैवेति।

२. वृत्तयोः स्पर्शरेखाभ्यां वृत्ताभ्यां च समुद्भवः।
तद्वृत्तभूतलाभ्यां च कोणः स्यात्सदृशो बुधाः!॥

ध्रुवप्रोतवृत्तनाडीवृत्तैः सञ्जातं भुजांशक्रान्त्यंशविषुवांशेत्यवयवत्रय-विशिष्टंचापजात्यत्रिकोणम्। अथवा ग्रहोपरिगत दृग्वृत्त-ध्रुवप्रोतवृत्त-याम्योत्तरवृत्तैरुत्पन्नं नतांशद्युज्याचापांशलवांशेत्यवयवत्रयविशिष्टं गोलीयत्रिकोणं सञ्जायते। अत्र प्रत्येकभुजस्य षड्राशितोऽल्पकल्पनेयुक्तिः। द्वयोर्महद्वृत्तयोः संपातः षड्भान्तरे भवति। यद्यत्र द्वौ भुजौ षड्राशितुल्यौ तदा त्रिकोणाभावः। तदधिके तु सुतरामभावः। अतः षड्राशितोऽल्पत्व एव त्रिकोणसम्भवः।

यथा गोले दृग्वृत्तयाम्योत्तरग्रहगतध्रुवप्रोतवृत्तैः सञ्जातं नतांश-लम्बांशद्युज्याचापांशेत्यवयवत्रयविशिष्टं त्रिभुजं गोलीयत्रिभुजाभिधं भवितुमर्हति।

(९) यत्त्रिकोणे एककोणो नवत्यंशमितस्तद्गोल-जात्यत्र्यस्रम्।

भाषार्थः—

जिस त्रिकोण में एककोण ९०° अंश के प्रमाण का होता है उसे गोल का "जात्यत्र्यस्र" कहते हैं।

रेखागणितवदत्रापि त्रिकोण एककोणस्य समकोणत्वात्तत् त्रिकोणं चापजात्याभिधम्। यथा गोले ग्रहगतध्रुवप्रोतवृत्त-नाडीवृत्त-क्रान्तिवृत्तैरुत्पन्नं क्रान्त्यंश-विषुवांश-भुजांशेत्यवयवत्रयविशिष्टं त्रिकोणकं नाडीवृत्त-ध्रुवप्रोतवृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणस्य नवत्यंशमितत्वात् तच्चापजात्याभिधम्। अत्र समकोणसंलग्नभुजौ क्रान्त्यंश-विषुवांशरुपौ भुजकोटिसंज्ञकौ। भुजांशश्च कर्ण इति व्यपदेश आचार्यैर्विहितः।

यथा गोले क्रान्तिनाड़ीध्रुवप्रोतवृत्तैः सञ्जातं भुजांशविषुवांशक्रान्त्यंशे-त्यवयवत्रयविशिष्टं त्रिभुजं नाड़ीध्रुवप्रोतवृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणस्यसमकोण-त्वाच्चापजात्यमितिभवितुमर्हति। इह भुजकोटिकर्णानां कल्पनं सरलरेखा-गणितवदेवेति।

(१०) द्वयोर्वृत्तयोरन्तर्गतक्षेत्रं वप्रक्षेत्रसंज्ञम्।

भाषार्थः—

दो वृत्तों के अन्तर्गत गोल प्रदेश "वप्र क्षेत्र" पद के नाम से कहा जाता है।

द्वयोर्महद्वृत्तयोः सम्पातः षड्राश्यन्तरे भवति। सम्पातद्वयान्तर्गत क्षेत्रं

वप्रक्षेत्रमित्युच्यते। यथा गोले पूर्वापरनाडीवृत्तयोः सम्पातौ पूर्वपश्चिमस्वस्तिकयोर्भवतः। सम्पातद्वयान्तर्गतपूर्वापरनाडीवृत्ताभ्यामुत्पन्नाकारो वप्रसंज्ञकः।

यथा गोले पूर्वापरनाडीवृत्तयोः सम्पातेन पूर्वस्वस्तिकात् पश्चिम-स्वस्तिकपर्यन्तं वृत्तयोरन्तर्गतो गोलप्रदेशो वप्रक्षेत्रपदेन व्यवह्रियत इति।

(११) यदि केनचित् क्षेत्रेण गोलश्छेदितस्तदा तत् खण्डं गोलखण्डसंज्ञम्।

एतत्स्पष्टमेवेति।

एवमेकादशपरिभाषाः।

भाषार्थः—

यदि किसी क्षेत्र के द्वारा गोल का छेदन किया गया है तब वह खण्ड (छेदित भाग) "गोल खण्ड" संज्ञक होता है।

इस प्रकार ये ११ परिभाषाएं ध्यान देने योग्य हैं।

यथाऽहोरात्रेण गोलश्छेद्यते तदा खण्डद्वयस्य गोलखण्डसंज्ञेति बोध्यम्।

अथ प्रथमं क्षेत्रम् (१)

यदि गोलघनक्षेत्रं छेदितं केनचिद्भवेत्।
क्षेत्रेण च्छेदितः स स्यात् प्रदेशो वृत्त एव हि॥१॥[1]

यदीति। यदि गोलघनक्षेत्रं केनचित् समधरातलगतेन क्षेत्रेण च्छेदितं=खण्डितं भवेत्तदा स छेदितः प्रदेशो वृत्तो=वृत्तानुकार एवेति।

---

१. यदि चैकेन गोलेन गोलोऽन्यश्छेदितो भवेत्।
तदा च्छेदनरूपं तत्स्याद्वृत्ताकारमेव हि॥

अत्रोपपत्तिः। अत्र प्रत्येकगोलकेन्द्राद्गोलसंपातगतप्रत्येकबिन्दुपर्यन्तं सूत्रकरणेन गोलयोः केन्द्रगामिनीरेखाकरणेन च केन्द्रगामिनीरेखायां गोलकेन्द्रान्तरमाधारः प्रत्येकगोलव्यासार्धरूपौ च भुजावीति सञ्जातानां त्रिभुजानामाधारस्य सर्वगतत्वात्तद्गोलव्यासार्धरूपभुजयोश्च मिथस्तुल्यत्वात् साम्यत्वमतिरोहितमेव (रे. अ. १ क्षे. ८) ततश्च केन्द्रान्तररेखागोलव्यासार्धाभ्यामुत्पन्नकोणस्य प्रत्येकगोलकेन्द्रगतस्य सर्वत्र तुल्यत्वात् केन्द्रगामिनीरेखागोलसम्पाताच्छेदनबिन्दुं यावच्चापानि समानि सिद्धान्यतश्छेदितप्रदेशस्य वृत्तत्वं जातं अस्य केन्द्रं केन्द्रगामिनीरेखागोल-सम्पातबिन्दुर्भवितुमर्हतीति।

यथाऽत्र कल्प्यते। गोले ध्रुवस्थानात्पूर्वस्वस्तिकबद्धसूत्रं नवत्यंशपूर्णजीवा तथा ध्रुवात् खमध्यावधिलम्बांशपूर्णजीवा खमध्यात् पूर्वस्वस्तिकावधि-र्नवत्यंशपूर्णजीवेति सूत्रत्रयेण यत्त्रिभुजं जातं तेन च्छेदितस्य गोलस्य वृत्तत्वमेव स्यादर्थात् खमध्यध्रुवपूर्वस्वस्तिकेति बिन्दुत्रयमेकवृत्तगतमेवेति।

अत्र गोलकेन्द्रात् त्रिभुजधरातलोपरि लम्बः कार्यः (रे.अ. ११क्षे. ११) लम्बमूलात्प्रत्येकच्छेदितबिन्दुं यावद्रेखाः कार्यास्तथा गोलकेन्द्रात् प्रत्येकच्छेदितबिन्दुं यावद्रेखाश्च कार्याः।

भाषार्थ– यदि गोलघन क्षेत्र को किसी समधरातल गत क्षेत्र-वृत्त के द्वारा छेदित (विभाजित) किया जाता है तो वह छेदित (विभाजित) प्रदेश ही वृत्ताकार होता है।

अत्रोपपत्तिः—

गोलकेन्द्राच्छेदनबिन्दुं = यावद्गोलत्रिज्या कर्णस्त्रिभुजधरातले बद्धरेखा भुजो लम्बः कोटिरिति सञ्जातानां सरलजात्यत्र्यस्राणां कर्णानां तुल्यत्वात् कोटेश्च सर्वनिष्ठत्वात्तद्वर्गान्तरपदरूपा भुजा अपि समा एव भवितुमर्हन्ति (रे.अ. १क्षे. ४७) अतश्छेदितप्रदेशस्य वृत्तत्वं जातं यस्य केन्द्रं लम्बमूल (रे.अ.१ प. १५।१६) इति।

अथ प्रथमक्षेत्रस्याऽनुमानानि–

प्रथम क्षेत्र के अनुमान–

(१) द्वयोर्बृहद्वृत्तयोः सम्पातौ गोलव्यासोपरि भवतः। अत एवैकेनापरमर्धितं भवति।

भाषार्थः—

दो बृहद् वृत्तों के सम्पात गोलव्यासों के ऊपर होते हैं। इसलिये एक के द्वारा दूसरा अधिक आधा किया हुआ होता है।

यथा– याम्योत्तरोन्मण्डलयोः सम्पातौ ध्रुवसूत्रे भवतः। याम्योत्तरेण चोन्मण्डलमर्धितं भवतीति स्पष्टम्।

(२) व्यासोभयप्रान्तबिन्दुद्वयभिन्नौ यौ बिन्दू तयोरुपरिगतं बृहद्वृत्तमेकमेव भवति।

भाषार्थः—

व्यास के दोनों किनारों पर दो बिन्दुओं से भिन्न जो दो बिन्दु हैं उनके ऊपर गया हुआ ''बृहद् वृत्त'' एक ही होता है।

यथा– खमध्यध्रुवयोर्गतं महद्वृत्तं याम्योत्तरमेवास्ति।

(३) गोलत्रिकोणस्थभुजयोः स्वमार्गेण वर्धितयोः सम्पातः प्रथमसम्पाताद्धार्धांशा १८०°न्तर एव भवति।

भाषार्थः—

गोल त्रिकोण में स्थित भुजा के अपने मार्ग द्वारा वर्धित सम्पात प्रथम सम्पातसे १८०° (एक सौ अस्सी) अंश के अन्तर पर होता है।

यथा– नतांशलम्बांशद्युज्याचापांशेत्यवयवत्रयविशिष्टे त्रिकोणे नतांश-लम्बांशयोः स्वमार्गेण वर्द्धितयोरपरसम्पातोऽधः खस्वस्तिके भवति।

(४) वृत्तस्य ध्रुवबिन्दू तथा तस्य वृत्तस्य केन्द्रं गोलकेन्द्रं चैते चत्वारो बिन्दवः एकस्यां सरलरेखायामेव सा च सरलरेखा तद्वृत्तक्षेत्रोपरि लम्बरुपा स्यात्।

भाषार्थः—

वृत्त के ध्रुव बिन्दु (द्वय) तथा उस वृत्त के केन्द्र और गोल केन्द्र ये चार बिन्दुएं एक सरल रेखा में ही हो और वह सरल रेखा उस वृत्त क्षेत्र के उपर लम्बरुप में होवे।

कस्यचिद्वृत्तस्य गर्भकेन्द्रे कृता लम्बरेखा गोलकेन्द्रं भित्वा पृष्ठकेन्द्रद्वयमपि यास्त्येव। यथा– अहोरात्रवृत्तस्य गर्भकेन्द्रे लम्बरूपध्रुवसूत्र-महोरात्रस्य पृष्ठकेन्द्ररूपयो र्ध्रुवस्थानयोर्गोलगर्भकेन्द्रे च यातीति स्पष्टम्।

(५) काचिद्रेखा क्षेत्रं वा कस्यचिद्वृत्तस्योपरि लम्बः स च चतुर्णां बिन्दूनामन्यतमबिन्दुगतस्तदा शेषबिन्दुत्रयं च तल्लम्बगतं भवेत्। एवं रेखा क्षेत्रं वा चतुर्णां बिन्दूनां मध्ये बिन्दुद्वयगतं तदा वृत्तोपरि सा रेखाक्षेत्रं वा लम्बः। शेषं च बिन्दुद्वयं तस्यामेव रेखायां क्षेत्रे वा गतमस्तीति ज्ञेयम्।

भाषार्थः—

कोई रेखा क्षेत्र को अथवा किसी वृत्त के ऊपर लम्ब और वह

किन्हीं चार बिन्दुओं में से किसी अन्य बिन्दु पर गया हो तब शेष तीन अन्य बिन्दु उस लम्ब पर गयी हुई होनी चाहिए। इस प्रकार रेखाक्षेत्र अथवा चार बिन्दुओं के मध्य में बिन्दु द्वयगत हों तब वृत्त के ऊपर वह रेखा अथवा वह क्षेत्र लम्ब शेष बिन्दुद्वय उसी रेखा क्षेत्र में गये हुए होते हैं ऐसा जानना चाहिए।

पूर्वोक्तचत्वारो बिन्दवो वृत्तस्य गर्भकेन्द्रे लम्बरूपरेखायां तिष्ठन्ति। तेनैकस्य तत्ररेखायां सत्वेऽन्येऽपि त्रयो बिन्दवोऽवश्यं तत्र स्थास्यन्ति- अपरं स्पष्टमेव।

(६) द्वयोर्बृहद्वृत्तयोः क्षेत्रे यदि लम्बरुपे तदैकवृत्तस्य ध्रुवबिन्दौ द्वितीयस्य क्षेत्रं गतं स्यात्। एकवृत्तस्य ध्रुवबिन्दौ द्वितीयवृत्तं गतं तदैकवृत्तक्षेत्रं द्वितीयवृत्तक्षेत्रोपरि लम्बरुपं स्यात्।

भाषार्थः—

दो बृहद् वृत्तों के क्षेत्र में यदि लम्ब डाला जाये तो एक वृत्त का ध्रुव-बिन्दु द्वितीय के क्षेत्र में गया हुआ होगा। एक वृत्त के ध्रुव बिन्दु द्वितीय वृत्त में गया हुआ हो तब एक वृत्तक्षेत्र को द्वितीय वृत्तक्षेत्र पर लम्बरुप होना चाहिए।

यथा— याम्योत्तरनाडीवृत्ते परस्परं लम्बरूपे वर्तेते। तथाच मिथः पृष्ठीय केन्द्रगतेऽपि स्तः।

(७) एकं बृहद्वृत्तं द्वितीयबृहद्वृत्तस्यैकध्रुवगतं तदा द्वितीयबृहद्वृत्तमाद्यबृहद्वृत्तध्रुवबिन्दुद्वयगतं भवति।

भाषार्थः—

एक बृहद्वृत्त द्वितीयबृहद्वृत्त के एक ध्रुव में गया हुआ हो तब द्वितीयबृहद्वृत्त आद्य (पूर्व) बृहद् वृत्त के ध्रुवबिन्दु द्वय में गया हुआ होता है।

यथा— याम्योत्तरवृत्तं नाडीवृत्तस्य पृष्ठकेन्द्ररूपध्रुवबिन्द्वोर्गतं तदा नाडीवृत्तं याम्योत्तरवृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्ररूपपूर्वापरस्वस्तिक-बिन्दुंद्वयगतमिति स्पष्टमेव।

(८) समानान्तरवृत्तयोर्याम्योत्तररेखा या चतुर्थपरिभाषया सिद्धा सा तथा तद्वृत्तयोर्ध्रुवबिन्दू चैकस्यामेव सरलरेखायां भवन्ति। एवं ययोर्वृत्तयोर्याम्योत्तररेखा द्वौ ध्रुवबिन्दू चैकत्र रेखायां ते समानान्तरवृत्ते भवतः।

एवमष्टावनुमानानि प्रथमक्षेत्रसिद्धानि।
सर्वाण्येतानि स्पष्टतराण्येवेति।

भाषार्थः—

दो समानान्तर वृत्तों के याम्योत्तर रेखा (दक्षिणोत्तर रेखा) जो चतुर्थ परिभाषा के द्वारा सिद्ध है वह और उन दो वृत्तों के दो ध्रुव बिन्दु एक ही सरल रेखा में होते हैं। इस प्रकार जिन दो वृत्तों की याम्योत्तर रेखा दो ध्रुवबिन्दुओं की एक रेखा में होवे, वे दोनों समानान्तर वृत्त में होते हैं।

इस प्रकार अष्ट अनुमान (परिभाषा) प्रथम क्षेत्र की सिद्ध होती हैं।

अत्रोदाहरणार्थमहोरात्रनाडीवृत्तेति वृत्तद्वयस्य पर्यालोचनमलम्।

अथ द्वितीयं क्षेत्रम् (२)

गोलोपरिगवृत्तस्य परिधिस्थितबिन्दुतः।
तद्वृत्तध्रुवबिन्दुः स्यात्समानान्तर एव हि ॥२॥

गोलोपरीति। गोलोपरिगवृत्तस्य = गोलस्थवलयस्य परिधिस्थितबिन्दुतः = पालीगतचिह्नात् तत्तस्य वृत्तस्य ध्रुवबिन्दुः समानान्तरे=तुल्यान्तर एव हि= निश्चयेन स्यात्=भवतीति।

भाषार्थ– गोल में स्थित वलय के परिधि स्थित बिन्दु से उस वृत्त के निश्चित किये हुए समानान्तर पर ही ध्रुव बिन्दु होता है।

यथा गोले अहोरात्रवृत्तस्य ध्रुवस्थानाभिधाद्ध्रुवबिन्दोरहोरात्रवृत्तस्य प्रत्येकबिन्दुस्तुल्यान्तरगत एव भवितुमर्हति।

गोलकेन्द्राद्ध्रुवस्थानपर्यन्तं रेखा ध्रुवसूत्राभिधा, कार्या सा अहोरात्रवृत्तधरातले यत्र लग्ना तस्मादहोरात्रवृत्तप्रत्येकबिन्दुं यावद्रेखाः कार्यास्तथा गोलकेन्द्रादहोरात्रवृत्तप्रत्येकबिन्दुं यावच्च रेखाः कार्याः।

अत्रोपपत्तिः।

गोलकेन्द्रादहोरात्रवृत्तपर्यन्तं गोलत्रिज्या कर्णस्तथा अहोरात्रधरातले बद्धरेखा भुजो ध्रुवसूत्रे गोलकेन्द्रादहोरात्रधरातलं यावत्कोटिरिति सञ्जातानां त्रिभुजानां जात्यत्वम्। ध्रुवसूत्रस्याहोरात्रधरातले लम्बरूपत्वात्। (गो.रे.क्षे. १ अ.५) गोलत्रिज्यामितकर्णानां सर्वत्र समत्वात्। ध्रुवसूत्रखण्डात्मक कोटेश्च सर्वगतत्वात्तद्वर्गान्तरपदात्मका भुजा अपि समा एव भविष्यन्ति (रे.अ. १ क्षेत्र

४७) ततश्च त्रिभुजानि सर्वांशैस्तुल्यानि (रे.अ.१क्षे.८) अतो गोलत्रिज्याध्रुवसूत्राभ्यामुत्पन्नकोणस्य गोलकेन्द्रगतस्य सर्वत्र समत्वात् ध्रुवादहोरात्रवृत्तं यावत्तत्सन्मुखचापानि समानानीत्युपपन्नम् [१]।

अत्र द्वितीयक्षेत्रस्य षडनुमानानि।

द्वितीय क्षेत्र की ६ परिभाषाएं (अनुमान) है।

(१) बृहद्वृत्तगसर्वबिन्दुतो ध्रुवबिन्दुर्नवत्यंशान्तरे स्यात्।

भाषार्थः—

गोलस्थ (पूर्वा-पर) वृत्त की परिधि स्थित चिह्न से (समस्थान) ध्रुवबिन्दु ९०° अंश (अर्थात् समानान्तर अंश) के अन्तर पर होता है।

यथा पूर्वापरवृत्तस्थ प्रत्येकबिन्दुतः समस्थानं नवत्यंशान्तरेऽस्ति।

(२) यत् क्षेत्रं रेखा वा गोलकेन्द्रं भित्वा याति। सा गोलस्य समानभागद्वयकर्त्री भवति।

भाषार्थः—

जो क्षेत्र अथवा रेखा गोलकेन्द्र को पार (भेदन) करती है। वह गोल को दो समान भागों में विभक्त करती है।

काचिदपि रेखा कस्यचित् क्षेत्रस्य धरातलगतैव भवति। अतो रेखा क्षेत्रं वेत्युभयं प्रकृत एकमेव। यथा याम्योत्तरवृत्तधरातलं ध्रुवसूत्रं वा गोलकेन्द्रं भित्वा याति तद्धरातलेन च गोलोऽर्धितो भवतीति स्पष्टम्।

(३) गोलपृष्ठस्थः कोऽपि बिन्दुर्यद्यन्यबिन्दुभ्यां नवत्यंशान्तरे परं तौ बिन्दू व्यासोभयप्रान्तगतौ न भवतस्तदा।

---

१. *अत्र विशेषोक्तगोलीयरेखागणितस्य द्वितीया प्रतिज्ञा। यथा—*

गोलीयचापत्रिभुजे मिथः सन्मुखगे हि ये।
ते समे विदुषा ज्ञेये मिथो गोलविदा सदा॥

अत्र यैस्त्रिज्यावृत्तैर्गोलत्रिकोणं भवति। तेषामेव वृत्तानामन्यदिशि मिथः सम्पातेन यत्त्रिकोणं तत्सन्मुखत्रिकोणं भवितुमर्हति षड्भान्तरगतत्वात्।

अत्रोपपत्तिः।

वृत्तयोः सम्पातयोर्भाधान्तरगतत्वात्तत्तद्वृत्तीयचापमानं त्रिकोणयोः क्रमेण समानं भवितुमर्हति। कोणमानं च तत्रत्यप्रथमप्रतिज्ञया समानमित्यतस्तयोः सर्वावयवैः साम्यत्व-मतिरोहितमेव गोलज्ञानामिति किं ग्रन्थगौरवेणेति?

प्रथमबिन्दुस्तस्य बृहद्वृत्तस्य ध्रुवः स्याद्यत् पूर्वोक्तबिन्दुद्वयगतं वृत्तमस्ति। गोलरेखागणितप्रथमक्षेत्रद्वितीयानुमानात्। तथा द्वितीयक्षेत्रप्रथमानुमानात्।

भाषार्थः—

गोल पृष्ठ पर स्थित कोई चिह्न (बिन्दु) यदि अन्य दो चिह्नों से ९०° अंश के अन्तर पर होवे किन्तु वे दोनों बिन्दु (चिह्न) व्यास के दोनों किनारों पर गत (गये हुए) नहीं हों तभी ऐसा समझें। प्रथम चिह्न से उस बृहद् वृत्त का जो ध्रुव है वह पूर्वोक्त दो चिह्नों पर गया हुआ वृत्त है। यह गोलरेखागणित के प्रथम क्षेत्र के द्वितीय अनुमान से तथा द्वितीय क्षेत्र के प्रथम अनुमान से सिद्ध है।

यथा खस्वस्तिकपूर्वस्वस्तिक-बिन्दुभ्यां समस्थानबिन्दुर्नवत्यंशान्तरेऽस्ति। अतस्तत्समस्थानं खस्वस्तिकपूर्वस्वस्तिकगतपूर्वापरवृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्रम्।

(४) लघुवृत्तस्य त्रिज्या तच्चापज्यातुल्या स्याद्यच्चापं तद्वृत्तीयध्रुवतद्वृत्तान्तरेऽस्ति। वा तल्लघुवृत्ततत्समानान्तर-बृहद्वृत्तयोरन्तरचापस्य कोटिज्यातुल्या भवति।

भाषार्थः—

लघु वृत्त की त्रिज्या उसकी चाप ज्या के तुल्य होती है जो चाप उस वृत्त के ध्रुव और उस वृत्त के अन्तर पर होती है। अथवा वह लघुवृत्त उस समानान्तर वृहद् वृत्त के अन्तर पर चाप की कोटिज्या के तुल्य (समान) होता है।

अहोरात्रवृत्तं लघुवृत्तं तस्य व्यासार्द्धं द्युज्या तस्याश्चापं ध्रुवादहोरात्रावधि ध्रुवप्रोतवृत्ते तिष्ठति। अहोरात्रनाडीवृत्तयोरन्तरे ध्रुवप्रोतवृत्ते क्रान्तिस्तस्याः कोटिचापं द्युज्या चापं पूर्वोक्तपरिमितमेव भवति। अतः क्रान्तिकोटिज्या द्युज्याभिधाऽहोरात्रस्य व्यासार्धमुच्यते।

(५) येषां लघुवृत्तानां क्षेत्रं गोलकेन्द्रात् तुल्यदूरगतं तानि वृत्तानि समानानि तथा यानि वृत्तानि समानानि तानि गोलकेन्द्रात् तुल्यदूरगतानि भवन्ति। यदि तुल्यदूरगतानि गोलकेन्द्रान्न सन्ति। तदा समीपगानि दूरगवृत्तप्रमाणतो महत्मानानि भवन्ति। तथा ये

वृत्ते न्यूनाधिकप्रमाणके तयोर्महत्प्रमाणकवृत्तं गोलकेन्द्रात्समीपं अल्पप्रमाणकवृत्तं दूरगतं स्यात्।

भाषार्थ:—

जिन लघुवृत्तों का क्षेत्र गोलकेन्द्र से समान दूरी पर गया हुआ है वे सभी समान वृत्त वाले होते हैं और जो वृत समान (वृत्त) हैं वे गोलकेन्द्र से समान दूरी पर स्थित होते हैं। यदि तुल्य दूरी पर स्थित गोलकेन्द्र से नहीं हैं, तब समीप स्थित दूर वृत्त के प्रमाण से (महत्तम) बड़े होते हैं; इस प्रकार जो वृत्त पर न्यूनाधिक (थोड़ा कमी बेशी) प्रमाण से उन दोनों का महत् (बडा) प्रमाण बताने वाला वृत्त गोल केन्द्र के समीप कम प्रमाण बताने वाला वृत्त दूर गया हुआ होता है।

व्यासार्धानां समत्वाद्वृत्तानां साम्यं भवति। न्यूनाधिकत्वान्न्यूनाधिकत्वं भवति। अतः (रे.ग. ३ अ. १३, १४प्र.) क्षेत्रमितियुक्त्या सर्वं स्फुटं भवति।

(६) समानान्तरवृत्तयोरुपरि तदीयध्रुवतो गतं वृत्तं तुल्यप्रमाणकं वृत्तध्रुवयोरन्तरे वा वृत्तयोरन्तरे तुल्यप्रमाणकं भवति।

एतानि सर्वाणि स्पष्टतराण्येवेति।

भाषार्थ:—

दो समानान्तर (तुल्यान्तर) वृत्तों के ऊपर उस ध्रुव से गत वृत्त जो तुल्य प्रमाण के वृत्त के ध्रुव और अन्तर पर अथवा वृत्त के अन्तर पर तुल्य प्रमाण के होते हैं।

यथा अहोरात्रनाड़ीवृत्तयोरुपरि ध्रुवप्रोतवृत्तकरणेन तद्वृत्तेषु सर्वत्र अहोरात्रनाडीवृत्तयोरन्तरं क्रान्तितुल्यं सममेव। एवञ्च तेष्वेव वृत्तेषु ध्रुवादहोरात्रावधि द्युज्याचापान्यपि समानानि एव।

अथ तृतीयं क्षेत्रम् (३)

वृत्तध्रुवादागतमण्डलान्तरे ।
वृत्तस्थचापं ध्रुवगः स कोणकः ॥

वृत्तध्रुवादिति। वृत्तध्रुवात्=वृत्तपृष्ठकेन्द्रादागतयोर्मण्डलयोर्वृत्तयोरन्तरे वृत्तस्थचापं=तद्वृत्तीयधनुर्यत् स ध्रुवगो=वृत्तद्वयोत्पन्नः कोणकः स्यात्।

भाषार्थः— वृत्त और ध्रुव के आये हुए मण्डलान्तर्गत में केन्द्र और चाप के मध्य उत्पन्न (वृत्तस्थ और चापगत दोनों वृतों में उत्पन्न) हुए को कोण कहते हैं।

यथा गोले याम्योत्तरवृत्तस्य ध्रुवात्पूर्वस्वस्तिकाख्यादागतयोः पूर्वापरनाडीवृत्तयोरन्तरे याम्योत्तरवृत्ते यच्चापं खमध्यनिरक्षखमंध्यान्तरं सः पूर्वापरनाडीवृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणः स्यादिति।

अत्रोपपत्तिः।

अत्र गोलकेन्द्रात् खमध्यनिरक्षखमध्यगतयोः सूत्रयोरुर्ध्वाधर-निरक्षोर्ध्वाधरसमाख्ययोः पूर्वापरसूत्रे लम्बरुपत्वात् (गो.क्षे. १. अनु.५) तदुत्पन्नकोणो गोलकेन्द्रगतस्तद्धरातलोत्पन्नकोणः स्यात्। (रे.अ.११. प.३.) स च खमध्यनिरक्षखमध्यान्तरगतचापेनाक्षांशमितेन समः। अत एव नाड़ीपूर्वा-परवृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणोऽक्षांशसमः सिद्धः (गो. प. ७) अत उपपन्नं यथोक्तमिति।

अथ तृतीयक्षेत्रसिद्धानुमानानि।

तृतीय क्षेत्र के सिद्ध अनुमान (परिभाषाएं)

(१) द्वयोर्बृहद्वृत्तयोः क्षेत्रं यदि परस्परं लम्बरुपं तदा वृत्तयोः परिधी मिथो लम्बौ भवतः। वा यदि वृत्तयोः परिधी लम्बौ मिथस्तदा वृत्तयो क्षेत्रे मिथो लम्बरूपे स्तः।

किन्हीं दो बृहद् वृत्तों का क्षेत्र यदि परस्पर लम्बरूप है, तब उन दोनों वृत्तों की परिधि परस्पर लम्ब रूप होती है। अथवा यदि उन दोनों वृत्तों की परिधि परस्पर लम्ब रुप हो— तब वृत्तों के क्षेत्र में परस्पर लम्ब रुप में ही होती है।

धरातलोत्पन्नकोणो वृत्तोत्पन्नकोणसमानो भवति। यदि धरातलोत्पन्न-कोणः समकोणस्तदा वृत्तद्वयं परस्परं लम्बमिति याम्योत्तरोन्मण्डलवृत्तधरातल-विभावनया स्पष्टम् (गो.रे. ७ प.)।

(२) द्वयोर्बृहद्वृत्तयोः सम्पातेनोत्पंन्नौ सम्मुखगौ, कोणौ तुल्यौ स्तः। तथा समीपगतकोणद्वययोगः समकोद्वयतुल्यः। अथ वृत्तयोः सम्पातोत्पन्नकोणतुल्य एव सम्पाताद्धार्धांशान्तरे तद्वृत्तयोः सम्पातजकोणो भवति।

—

भाषार्थः—

दो बृहद् वृत्तों के सम्पात से उत्पन्न आमने सामने जाने वाले,दोनों कोण तुल्य (समान) होते हैं। और समीप गये हुये दोनों कोणों का योग दो समकोणों के तुल्य होता है। इस प्रकार दो वृत्तों के सम्पात से उत्पन्न कोण के बराबर ही १८०° अंश के अन्तर पर उन दो वृत्तों के सम्पात से उत्पन्न कोण होता है।

क्षितिजोन्मण्डलाभ्यां पूर्वस्वस्तिक उत्पन्नकोणमानमक्षांशसममुभयपार्श्वे (गो. रे. ३ क्षे.)। अतः सम्मुखगकोणौ समाविति युक्तमेव तथा च क्षितिजोन्मण्डलोत्पन्नकोणोऽक्षांशसमः। उत्तरगोलीयोन्मण्डलाद् याम्य-क्षितिजावधि याम्योत्तरवृत्ते चापमानम् = ९०+लम्बांशाः। उक्तत्रयाणां योगः = अक्षांशाः + लम्बांशाः + ९०=१८०। तस्माद् क्षितिजवृत्ते उन्मण्डल-सम्पातादुत्पन्नकोणद्वययोगो भार्धांश (१८०) सम इति।

(३) द्वयोर्बृहद्वृत्तयोर्ध्रुवयोर्यदल्पमन्तरं तदेव द्वयोर्वृत-क्षेत्रयोर्नमनम्।

भाषार्थः—

दो वृहद् वृत्तों के ध्रुव का जो स्वल्पान्तर है वही दो वृत्तों के क्षेत्र का नमन (अन्तर) होता है।

यथा नाडीपूर्वापरवृत्तयोर्याम्योत्तरवृत्तेऽन्तरमक्षांशास्त एव तद्वृत्तद्वय-पृष्ठीयकेन्द्रयोर्ध्रुवसमस्थानयोस्तत्रैव वृत्तेऽन्तरम्।

(४) कस्यचिच्चापस्य ध्रुवगतकोणः स एव यो हि तद्वृतस्य त्रिज्यासूत्रद्वयान्तरकोणः गर्भकेन्द्राच्चापप्रान्तगे त्रिज्यासूत्रे।

भाषार्थः—

किसी चाप का ध्रुवगत कोण, वही उस वृत्त के त्रिज्यासूत्र द्वय के अन्तर पर कोण, मध्य (गर्भ) केन्द्र से चाप प्रान्त पर जाने वाले त्रिज्या सूत्र होते हैं।

यथाक्षितिजोन्मण्डलोत्पन्नकोणो ध्रुवसूत्रसमसूत्रोत्पन्नकोणेन सम इति मूलक्षेत्रात् स्पष्टम्।

(५) समानान्तरवृत्तयोर्ध्रुवगतं यदन्यवृत्तद्वयं तदन्तरगं समानान्तरवृत्तयोश्चापं सजातीयं अंशैस्तुल्यमित्यर्थः।

भाषार्थः—

समानान्तर दो वृत्तों के ध्रुव पर गये हुए जो अन्य (दूसरे) वृत्त द्वय हैं उनके उस अन्तर पर (गये हुए) गत समानान्तर दो वृत्तों का चाप सजातीय अंशों के तुल्य (समान) होता है।

यथाऽहोरात्रनाडीवृत्ते समानान्तरे। तद्वृत्तयोः पृष्ठकेन्द्राद्ध्रुव-स्थानादागतयोरुन्मण्डलयाम्योत्तरयोर्मध्ये तद्वृत्तद्वयचापे पाद-(४) मिते सजातीय एव।

(६) द्वयोश्चापयोः सम्बन्धिन्यौ ये छाये (स्पर्श रेखे) तदन्तरगतकोणो योगबिन्दौ स स्याद्यो हि द्वयोश्चापयोर्गोलकोण इति।

भाषार्थः—

किन्हीं दो चापों की सम्बन्धित जो दो छाया (स्पर्श रेखा) उस पर गत (गया हुआ) कोण योग बिन्दु द्वय होती हैं, जो दोनों चापों के "गोल कोण" हैं, ऐसा समझें।

अथ चतुर्थं क्षेत्रम् (४)

व्यासाग्रबिन्दूपरिलम्बरुप –
क्षेत्रस्य संस्पर्श इहास्ति गोले ॥

व्यासाग्रबिन्दूपरीति। व्यासाग्रबिन्दूपरि व्यासरेखाप्रान्ते लम्बरूपस्य क्षेत्रस्य धरातलस्य इह गोले = किन्तु तद्व्यासजनितगोले संस्पर्शः अस्तीति। अन्यस्य न। तथा च स्पर्श शब्देन एकस्मिन्नेव बिन्दौ स्पर्शो न तु बिन्दु द्वय इति।

भाषार्थ– व्यासाग्र बिन्दू के ऊपर लम्बरूप क्षेत्र का गोल पर ही उस व्यास जनित क्षेत्र के ऊपर ही उस बिन्दू का संस्पर्श होता है अन्यत्र नहीं। यहाँ स्पर्श शब्द से एक ही बिन्दु का स्पर्श जाने न की दो बिंदुओं का।

यथाऽत्र कल्प्यताम्। गोले पूर्वस्वस्तिकबिन्दौ पूर्वापरसूत्ररूपगोलव्यासाग्रे किमपि धरातलं लम्बरूपं तदा तद्गोले तस्मिन्नेव बिन्दौ स्पर्शं करिष्यति नान्यत्रेति यद्येवं न चेत्तदा कल्प्यतां तद्धरातलमन्यस्मिन् प बिन्दौ गोले योगं करोति तदा तद्बिन्दुद्वयगता गोलकेन्द्राद्रेखैका कार्या। तथा संयोगबिन्दोः पूर्वस्वस्तिकावधिरेखा तद्धरातलगता कार्या।

अत्रोपपत्तिः।

अथ गोलकेन्द्रात् पूर्वस्वस्तिकपर्यन्तं पूर्वापरसूत्रखण्डं त्रिज्यासमं संयोगबिन्दुगतत्रिज्यासूत्रेण सममत एव पूर्वस्वस्तिकसंलग्नकोणमानं बद्धरेखापूर्वापरसूत्राभ्यामुत्पन्नं बद्धरेखासंयोगबिन्दुगतत्रिज्यारेखाभ्यामुत्पन्नकोणेन समं (रे. अ. १ क्षे. ५) परञ्च पूर्वापरसूत्रस्य धरातले लम्बरुपत्वात्तत्कोणमानं समाख्यमतः संयोगबिन्दुगतकोणोऽपि समाख्यः स्यात्। अत एव त्रिभुजे कोणद्वययोगस्य समकोणद्वययोगसमत्वादीदृशी कल्पना न समीचीना (रे.अ. १ क्षे.१७) अत एव स्पर्श एव स्यादित्यलं पल्लवितेनेति।

अत्रानुमानानि।

चतुर्थ क्षेत्र के अनुमान (परिभाषा)

(१) गोलस्य सरलक्षेत्रेण स्पर्श एकस्मिन् बिन्दावेव सम्भवति।

भाषार्थः—

गोल का सरल (सीधा) क्षेत्र से स्पर्श किसी एक बिन्दु पर ही सम्भव है।

प्रकृतप्रतिज्ञया स्पष्टम्।

(२) यदि सरलक्षेत्रं गोले स्पर्श करोति तदा स्पर्शबिन्दुगं त्रिज्यासूत्रं तत्क्षेत्रोपरि लम्बरूपम्।

भाषार्थः—

यदि सरल क्षेत्र गोल में स्पर्श करता है तब स्पर्श बिन्दु पर गया हुआ त्रिज्या सूत्र उस क्षेत्र पर लम्बरूप होता है।

क्षेत्रमितेस्तृतीयाध्यायस्य १७ प्रतिज्ञया स्पष्टम्।

(३) सरलक्षेत्रगोलस्पर्शे क्षेत्रोपरि लम्बरेखा गोलकेन्द्रं भित्त्वा याति।

भाषार्थः—

सरलक्षेत्र गोल स्पर्श में क्षेत्र के ऊपर लम्बरेखा गोलकेन्द्र का भेदन करती हैं; अर्थात् पार करती है।

एतत्तु (क्षे.३ अ.१८ प्र.) अनया सिद्धं भवति।

(४) यदि सरलक्षेत्रं गोले स्पर्शं करोति तदा स्पर्शबिन्दुगतं

यद्वृत्तं तत्क्षेत्रसरलक्षेत्रयोगरेखा तद्वृत्तच्छाया (स्पर्श रेखा) भवति।

भाषार्थ:—

यदि सरल क्षेत्र गोल में स्पर्श करता है तब स्पर्श बिन्दु पर गया हुआ जो वृत्त है वह/उस क्षेत्र और सरल क्षेत्र की योग रेखा उस वृत्त की छाया (स्पर्श रेखा) होती है।

यथा— ध्रुवसूत्रे ध्रुवस्थाने काचिद्रेखालम्बः। सा रेखाऽपि कस्मिंश्चिद्धरातले भवितुमर्हति। तद्धरातलं याम्योत्तरस्य स्पर्शकारि। पूर्वोक्तलम्बरेखा च तद्धरातलयाम्योत्तरवृत्तयोगबिन्दुगता सती याम्योत्तरस्य स्पशरेखा भवतीति।

(५) कस्यचिदेकवृतस्य च्छाया तेषां सर्वेषां वृत्तानां च्छाया स्यात् येषां वृत्तानां क्षेत्रे सा च्छाया रेखा स्यात्।

भाषार्थ:—

किसी एक वृत्त की छाया उन सभी वृत्तों की छाया होती है जिन वृत्तों के क्षेत्र में वह छाया रेखा होती है।

यथा—क्रान्तिवृत्तस्थग्रहगते ध्रुवप्रोताहोरात्रवृत्ते विधेये. ग्रहबिन्दौ च ध्रुवप्रोतवृत्ते लम्बरुपं महद्वृत्तं कार्यम्। एवंकृतेऽहोरात्रतन्महद्वृत्तयोः स्पशरेखा एकैव भवितुमर्हति।

(इति चतुर्थक्षेत्रानुमानानि।)

स्पष्टतराण्येवैतानीति।

अथ पञ्चमं क्षेत्रम् (५)

समद्विबाहुत्रिभुजे समानौ।
कोणौ भवेतां धरणीविलग्नौ॥

समेति। समद्विबाहुत्रिभुजे धरणीविलग्नावाधारसंगतौ कोणौ समानौ भवेताम्।

भाषार्थ— समद्विबाहु त्रिभुज में (समान दो भुजाओं वाले त्रिभुज में) धरातलगत आधार रेखा पर उत्पन्न दोनों कोण समान ही होंगे।

यथात्र कल्प्यते। गोले स्वखमध्यस्वरेखाखमध्ययोर्गतमेकं महद्वृत्तं कार्य्यं

तदा ध्रुवात् खमध्यावधि याम्योत्तरवृत्ते लम्बांशमितो भुजः। ध्रुवाद्रेखाखमध्यावधि रेखावृत्तीयेन लम्बांशतुल्येन भुजेन समानस्तदा त्रिभुजेऽस्मिन् महद्वृत्तयाम्योत्तरवृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणो महद्वृत्तरेखावृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणेन समानः स्यात्।

अथ ध्रुवस्थानात् खमध्यगत्रिज्यारेखायां लम्बः कार्यः सा प्रथमलम्बज्याभिधा कल्पनीया एवञ्च ध्रुवादेव रेखाखमध्यगत्रिज्यासूत्रे लम्बः कार्यः (रे. प्र. क्षे. १२) सा द्वितीयलम्बज्यारेखेति कल्पनीया तथा च प्रथमलम्बज्यामूलात् खमध्यसूत्रे लम्बो महद्वृत्तधरातलगतः कार्यः। स प्रथमलम्बाभिधो ज्ञेयः। एवं च द्वितीयलम्बज्यामूलाद्रेखाखमध्यगसूत्रे लम्बो महद्वृत्तधरातलगत एव द्वितीयलम्बाभिधो विधेयः। तथा च लम्बयोर्योगबिन्दोर्ध्रुवावधि रेखा कार्या सा बद्धरेखाशब्देन व्यवहर्तव्या।

अत्रोपपत्तिः।

प्रथमलम्बज्याप्रथमलम्बबद्धरेखाभिस्त्रिभुजं संजातं तत् प्रथमत्रिभुजसंज्ञं तथा च द्वितीयलम्बज्याद्वितीयलम्बबद्धरेखाभिस्त्रिभुजं संजातं तद्द्वितीयत्रिभुजाख्यम्। अथात्र खमध्यगसूत्रं प्रथमलम्बज्याप्रथमलम्बरेखयोर्लम्बस्तेन प्रथमत्रिभुजधरातले लम्बः (रे. अ. ११ क्षे. ४) अत एव तद्गतमहद्वृत्तधरातलमपि प्रथमत्रिभुजधरातले लम्बरुपं तेन प्रथमत्रिभुजधरातलं महद्वृत्तधरातले लम्बरूपं जातम्। अनयैव रीत्या द्वितीयत्रिभुजधरातलमपि महद्वृत्तधरातले लम्बरूपं स्यात्। (रे. अ. ११ क्षे. १८) अतस्त्रिभुजयोर्योगरेखारूपा बद्धरेखा महद्वृत्तधरातले लम्बरूपा स्यात्। (रे. अ. ११ क्षे. १९) अतो बद्धरेखा प्रथमद्वितीयलम्बयोर्लम्बरूपा तेन प्रथम-द्वितीयत्रिभुजे जात्ये सम्पन्ने ययोः प्रथमद्वितीयलम्बज्यारुपौ कर्णौ समानौ बद्धरेखासमा कोटिस्तूभयनिष्ठा अतस्तद्वर्गान्तरपदसमौ भुजावपि समानावेव (रे. प्र. अ. ४७) तेन त्रिभुजद्वयं समानं (रे.अ. १ क्षे. ८) अतः प्रथमलम्बज्याप्रथमलम्बाभ्यामुत्पन्नकोणो द्वितीयलम्बज्याद्वितीयलम्बाभ्यामुत्पन्नकोणेन समानः। परं च प्रथमकोणः याम्योत्तरमहद्वृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणेन समः। द्वितीयश्च रेखामहद्वृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणेन तुल्यः (गो. रे. प. ७) अतो याम्योत्तरमहद्वृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणो रेखामहद्वृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणेन सम इत्युपपन्नं यथोक्तमित्यलम्।

अथ षष्ठं क्षेत्रम् (६)

भूलग्नकोणौ यदि तुल्यमानौ।
तदा तु तल्लग्नभुजौ समानौ।।

भूलग्नेति। यदि=चेत् भूलग्नकोणौ =आधारसंगतौ कोणौ तुल्यमानौ= सदृशौ (समानमानौ) तदा तु तल्लग्नभुजौ=तुल्यकोणाश्रितौ बाहू (भुजौ) समानौ = तुल्यौ भवत (स्याताम्) इति।

भाषार्थ— भूलग्न गत (आधार रेखा पर यदि उत्पन्न) दोनों कोणों का मान यदि तुल्य हो तो भूलग्नगत दोनों भुजायें भी समान होंगी।

यथाऽत्र कल्प्यताम्। पञ्चमक्षेत्रप्रतिपादितगोलीयचापत्र्यस्रे याम्योत्तरमहद्वृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणो रेखामहद्वृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणेन समस्तदा ध्रुवात् खमध्यावधि भुजो याम्योत्तरवृत्तीयो ध्रुवाद्रेखाखमध्यावधि रेखावृत्तीयेन भुजेन समः।

अत्रोपपत्तिः।

अत्रापि पूर्वक्षेत्रोपपत्तियुक्त्या बद्धरेखाया महद्वृत्तधरातलोपरि लम्बरुपत्वात्। त्रिभुजद्वयं जात्यमेव। परमत्र याम्योत्तरमहद्वृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणस्य रेखामहद्वृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणेन साम्यात् प्रथमलम्बज्याप्रथमलम्बाभ्यामुत्पन्नकोणो द्वितीयलम्बज्याद्वितीयलम्बाभ्यामुत्पन्नकोणेन समः (गो. रे. प. ७) तेन त्रिभुजद्वयं समानं स्यात् (रे. अ. १ क्षे. २६) अतः प्रथमलम्बज्या-द्वितीयलम्बज्यासमाना ततो जीवायाः समत्वात् तच्चापमपि ध्रुवात् खमध्यावधि ध्रुवाद्रेखाखमध्यपर्यन्तेन चापेन सममतो भुजौ समौ सञ्जातावित्युपपन्नं यथोक्तमिति।

अथ सप्तमं क्षेत्रम् (७)

गोलत्रिकोणे भुजयुग्मयोग–
स्तृतीयबाहोरधिको निरुक्तः।

गोलत्रिकोण इति। गोलत्रिकोणे=गोलीय चापत्रिभुजे भुजयुग्मयोगो= चापीय भुजद्वययुतिः तृतीयबाहोः=तृतीयभुजात् अधिको महान् निरुक्तः= कथितः।

भाषार्थ— गोलीय चाप त्रिभुज में चाप की दोनों भुजाओं का योग तीसरी भुजा से अधिक कहा गया है।

यथात्र कल्प्यताम्। नतांशलम्बांशद्युज्याचापांशेत्यवयवत्रयात्मके गोलीयचापत्रिभुजे भुजद्वययोगस्तृतीयभुजादधिकः स्यात्। अथात्र गोलकेन्द्रात् त्रिभुजकोणत्रयगताः क्रमेण ध्रुवसूत्रखमध्यगसूत्रग्रहगतत्रिज्यासूत्राख्या रेखाः कार्याः।

अत्रोपपत्तिः।

अत्र, ध्रुवसूत्रखमध्यगसूत्राभ्यामुत्पन्नकोणमानं लम्बांशसमं याम्योत्तरधरातले एवं च खमध्यगसूत्रग्रहगतत्रिज्यासूत्राभ्यामुत्पन्नकोणो नतांशसमो दृग्वृत्तधरातले। तथा च ग्रहगतत्रिज्यासूत्रध्रुवसूत्राभ्यामुत्पन्नकोणो ध्रुवप्रोतवृत्तधरातले द्युज्याचापांशसमः। एवमत्र त्रिभिः कोणैः सञ्जातधनकोणे कोणद्वययोगस्तृतीयादधिकः (रे. अ. ११ क्षे. २०) तेन लम्बांशनतांश-द्युज्याचापांशानां मध्येऽपि द्वयोर्योगस्तृतीयादधिक इत्युपपन्नं यथोक्तमिति।[1]

अथाऽष्टमं क्षेत्रम् (८)

गोलत्रिबाहौ खरसाग्निभागा –
दल्पा भुजानामपि संयुतिः स्यात्॥

गोलेति। गोलत्रिबाहौ=चापीयत्रिभुजे भुजानां=त्रयाणां बाहूनामपि संयुतिः=संयोगः (३६०) खरसाग्निभागाद्भगणांशादल्पा=न्यूना स्यात्।

भाषार्थ— चापीय त्रिभुज में तीनों भुजाओं का योग (भगणांश से) ३६० अंशों से कम ही होता है। अधिक नहीं होता।

चापीय त्रिभुज में दृग्वृत्तीय नतांश, पूर्वापर वृत्तीय नतांश, महद्वृत्तीय चापभागों का योग भांश (३६०°) से कम होता है।

---

१. गोलत्रिबाहौ भुजयोर्विशेषो।
न्यूनस्तृतीयाद्धि भुजात्रिरुक्तः॥
अत्रोपपत्तिरपि घनकोणे कोणद्वयान्तरस्य तृतीयकोणादल्पत्वात् प्रोक्तदिशैव स्फुटतरा। वा वृहद्भुजे लघुभुजतुल्यं खण्डं कृत्वा तदग्रप्रोतवृत्तकरणेन समद्विबाहुकं त्रिभुजमुत्पाद्य विशेषोक्तगोलीयरेखागणितस्य पञ्चमक्षेत्रेण पञ्चमक्षेत्रेण च स्फुटतरेति।

यथात्र कल्प्यताम्। नतांशलम्बांशद्युज्याचापांशेत्यवयवत्रयात्मके चापीयत्रिकोणे त्रयाणामपि भुजानां संयुतिर्भांशादल्पेति।

अत्रोपपत्तिः।

यद्येवं न तदा कल्प्यताम् भुजत्रययोगः खरसाग्निभागसमस्तस्मादधिको वा स्यात्। अथ यदि भुजत्रययोगः खरसाग्निभागसमस्तस्मादधिको वा स्यात्। अथ यदि भुजत्रययोगः खरसाग्निसमस्तदोत्तरध्रुवाद्दक्षिणध्रुवावधियाम्योत्तर ध्रुवप्रोतवृत्तीययोश्चापयोर्योगेन खरसाग्निमितेन भुजत्रययोगस्य समत्वात्तयोर्यदि लम्बांशद्युज्याचापांशरूपौ भुजावुभयनिष्ठौ विशोध्येते तदाऽपि समौ तेन नतांशमानं दक्षिणध्रुवाद्ग्रहावधि खमध्यावधि च स्थितयोश्चापयोर्योगेन समं संजातं परमत्र त्रिभुजे भुजद्वययोगस्य तृतीयादधिकत्वादेतादृशी कल्पना न युक्ता (गो. क्षे. ७) एवं भुजत्रययोगस्य खरसाग्नितोऽधिककल्पनायामपि तथैव लम्बांशद्युज्याचापांशयोरुभयनिष्ठयोर्विशोधनेन दक्षिणध्रुवाद्भुजद्वययोगमानं नतांशादल्पमेव सिध्यति परमिदमपि बाधितमेव (गो. क्षे. ७) तेनोक्तमेव तथ्यमर्थात् भुजत्रययोगो भांशाल्प एवेति दिक्।

अथ प्रकारान्तरेणोपपत्तिः।

अत्र गोलकेन्द्रात् त्रिभुजकोणबिन्दुषु सूत्राणि नीत्वा गोलकेन्द्रे यो घनकोणः स च त्रिभुजभुजत्रययोगसमः परश्च घनकोणे सर्वकोणयोगस्य भांशादल्पत्वात् (रे. अ. ११ क्षे. २१) भुजत्रययोगोऽपि भांशाल्प एवेति किं वैचित्र्यम्।

अथ नवमं क्षेत्रम् (९)

उरुकोणसंमुखभुजाच्च लघु
लघुकोणसंमुखभुजस्त्रिभुजे ।
उरुबाहुसंमुखगकोणतनु
र्लघुबाहुसंमुखगकोणमितिः ॥

उरुकोणेति। त्रिभुजे = चापीयत्रिकोणे उरुकोणसंमुखभुजात् = बृहत्कोणाभिमुखबाहोः लघुकोणसंमुखभुजो लघुर्भवति। लघुबाहुसंमुखगकोणमितिर्लघुभुजसंमुखस्थकोणमानं उरुबाहुसंमुखगकोणतनुर्महद्भुजसंमुखस्थकोणाल्लघुर्भवतीति। बृहद्भुजाभि कोणाल्लघुर्भवति।

भाषार्थ— चापीय त्रिकोण में बृहद् कोण की संमुख भुजा से लघु कोण के संमुख वाली भुजा लघु होती है। लघु भुजा के संमुख स्थित कोण का मान बड़ी भुजा के संमुख स्थित कोण से लघु (छोटा) होता है।

यथात्र कल्प्यताम्। गोले नतांशलम्बांशद्युज्याचापांशेत्यवयवत्रयात्मके चापीयत्रिभुजे यदि खमध्यसंलग्नकोणमानं ध्रुवगतकोणमानादधिकं तदा खमध्यगताधिककोणसंमुखभुजोद्युज्याचापाख्यो न्यूनकोणाभिमुखनतांश-चापादधिक इति।

अथात्र ध्रुवगताल्पकोणतुल्यः खमध्यबिन्दौ याम्योत्तरवृत्तेन सह कोणः कार्यः। ततः कोणकारकवृत्तं ध्रुवग्रहयोरन्तरे क्वापि ध्रुवप्रोतवृत्ते संयोगं करिष्यति खमध्यगतकोणस्याधिकत्वात्।

अत्रोपपत्तिः।

ध्रुवप्रोतवृत्तकोणकारकवृत्तसंपातात् ध्रुवावधि ध्रुवप्रोतवृत्ते द्युज्याचापखण्डमेकोऽवयवः लम्बांशमितो याम्योत्तरवृत्ते द्वितीयः खमध्यात् कोणकारकध्रुवप्रोतवृत्तयोः संपातावधि कोणकारकवृत्ते तृतीयः इत्यस्य क्षेत्रस्य ध्रुवगतखमध्यगतकोणयोः समत्वात् कोणकारकवृत्तीयभुजो ध्रुवप्रोतवृत्तीयभुजेन द्युज्याचापखण्डेन समः (गो. क्षे. ६)। अथ च नतांशमितो दृग्वृत्ते एकोऽवयवः कोणकारकवृत्ते द्वितीयः ध्रुवप्रोतवृत्ते द्युज्याचापद्वितीयखण्डं तृतीय इत्यत्र त्रिभुजे कोणकारकवृत्तीयभुजद्युज्याचापद्वितीयखण्डयोर्योगो नतांशादधिकः (गो. क्षे. ७)। परंच कोणकारकवृत्तीयभुजो द्युज्याचापस्य प्रथमखण्डेन सम इति पूर्वं प्रतिपादितम् तेन सम्पूर्णं द्युज्याचापं नतांशादधिकमित्युपपन्नं यथोक्तमिति।

अथ यदि तत्रैव त्रिभुजे द्युज्याचापरुपभुजो नतांशादधिकस्तदा द्युज्याचापसंमुखखमध्यगतकोणो नतांशाभिमुखध्रुवगतकोणादधिक इति॥

अत्रोपपत्तिः।

यद्येवं न तदा कल्प्यताम् ध्रुवगतकोणः खमध्यगतकोणेन समस्तस्मादधिको वा स्यात्। यदि समस्तदा द्युज्याचापं नतांशसमं सिध्यति (गो. क्षे. ६) परञ्च द्युज्याचापं नतांशादधिकं कल्पितमतस्तदसत् एवं ध्रुवलग्नकोणस्य खमध्यगतकोणादधिककल्पने द्युज्याचापं नतांशादल्पमेव जायते पूर्वप्रतिपादितपूर्वार्धोपपत्त्या। अतः सापि कल्पना न समीचीना। अतो द्युज्याचापस्य नतांशाधिकत्वे खमध्यगकोणमानं ध्रुवगतकोणादधिकमेवेत्युपपन्नं यथोक्तमिति।

अथ दशमं क्षेत्रम् (१०)

गोलत्रिबाहौ भुजयुग्मयोगः
खाष्टेन्दुतोऽल्पश्च समोऽधिको वा।
तदा तु दोःसंमुखकोणयोगः
खाष्टेन्दुतोऽल्पश्च समोऽधिकः स्यात्॥

गोलत्रिबाहाविति। गोलत्रिबाहौ=चापीयत्रिभुजे भुजयुग्मयोगो= भुजद्वययुतिः खाष्टेन्दुतः=भार्धांशतः (१८०°) साशीतिशतादल्पः समो वाऽधिकश्चेत्स्यात् तदा तु दोःसंमुखकोणयोगः=भुजयोः संमुखस्थकोणयोर्युतिः खाष्टेन्दुतः साशीतिशतादल्पः समोऽधिकश्च क्रमेण स्यात्।

भाषार्थ— चापीय त्रिभुज में (गोल स्थित तीनों भुजाओं में) दो भुजाओं का योग १८० अंश से कम हो, समान हो अथवा अधिक हो तो दो भुजाओं के संमुख कोण की (योग) युति १८० अंश से कम, समान अथवा अधिक इस क्रम से होगी।

यथात्र कल्प्यताम्। नतांशलम्बांशद्युज्याचापांशेत्यवयवत्रयात्मके चापीयत्रिभुजे यदि नतांशद्युज्याचापांशयोर्योगः साशीतिशतादल्पस्तदा तत्संमुखगयोर्ध्रुवगतखमध्यगतयोः कोणयोर्योगः साशीतिशतादल्प इति।

अत्रोपपत्तिः।

अथात्र नतांशद्युज्याचापांशयोर्योगः साशीतिशतादल्पस्तथोत्तरध्रुवा-द्दक्षिणध्रुवावधि ध्रुवप्रोतवृत्ते साशीतिशतसमः वृत्तद्वयसम्पातस्य परस्परं भार्धान्तरितत्वात्। अत एव तयोर्यदि द्युज्याचापरुपमुभयनिष्ठखण्डं विशोध्यते तदा नतांशात् दक्षिणध्रुवग्रहयोरन्तर्गतचापं ध्रुवप्रोतवृत्तीयमधिकं तेन याम्योत्तर-दृग्वृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणमानं दक्षिणदिग्गतं दक्षिणध्रुवगतयाम्योत्तरध्रुवप्रोत-वृत्तोत्पन्नकोणादधिकं (गो.क्षे. ६) परश्च दक्षिणध्रुवगतकोणमानमुत्तरध्रुवगत-कोणमानसमं (गो. क्षे. ३ अ. २) तथाच खमध्यस्थस्योत्तरदिग्गतकोणस्य दक्षिणदिग्गतकोणस्य च योगः साशीतिशतसमः (गो. क्षे. ३ अ. २) अत एव ध्रुवगतकोणस्य दक्षिणदिग्गतखमध्यगकोणादल्पत्वात्खमध्यगतोत्तरदिग्गत-कोणध्रुवगतकोणयोर्योगः साशीतिशताऽल्पो जातः। एवं यदा नतांशद्युज्या-चापांशयोर्योगः साशीतिशतसमस्तदा तत्संमुखकोणयोर्योगः साशीतिशतसमः स्यादिति।

अत्रोपपत्तिः।

यदा नतांशद्युज्याचापांशयोर्योगः साशीतिशतसमस्तदा ध्रुवाद्ध्रुवावधि ध्रुवप्रोतवृत्तीयचापस्यापि साशीतिशतसमत्वादुभयनिष्ठद्युज्याचापविशोधनेन ग्रहाद्दक्षिणध्रुवावधि ध्रुवप्रोतवृत्तीयचापं नतांशसमं स्यात् अतएव खमध्यगदक्षिणदिक्कः कोणो ध्रुवगतकोणेन समः। अत एव पूर्वप्रतिपादितयुक्त्या खमध्यगतकोणयोर्योगस्य साशीतिशतसमत्वात् खमध्यगतकोणध्रुवगत-कोणयोर्योगः साशीतिशतसम इति। एवं यदा नतांशद्युज्याचापांशयोर्योगः साशीतिशताऽधिकस्तदा तत्सम्मुखकोणयोर्योगोऽपि साशीतिशताऽधिक इति।

अत्रोपपत्तिः।

अथात्र नतांशद्युज्याचापांशयोर्योगस्य साशीतिशताऽधिकत्वात्तथैव द्युज्याचापस्योभयनिष्ठस्य विशोधनेन ग्रहाद्दक्षिणध्रुवावधि–ध्रुवप्रोतवृत्तीयचापं नतांशादल्पमिति सुप्रसिद्धमेव। अत एव ध्रुवगतकोणः खमध्यगतकोणा-दधिकस्ततः पूर्वयुक्त्यैव ध्रुवगतकोणस्यापरध्रुवगत कोणेन समत्वात् खमध्यगतोभयकोणयोर्योगस्य साशीतिशतसमत्वादुत्तरध्रुवगतकोणखमध्यग-कोणयोर्योगः साशीतिशताऽधिकः सिद्ध इत्युपपन्नं यथोक्तमिति।

अथैकादशं क्षेत्रम् (११)

एकगोलत्रिकोणस्य कोणस्थितै
बिन्दुभिर्मण्डलान्यभ्रनन्दांशकैः।
यानि तद्योगजातं त्रिकोणं परं
ते मिथः स्पर्धिनी कीर्तिते पण्डितैः॥

एकस्य कोणजबृहत्कोटिः संमुखगोन्यदोः।
द्वितीयदोर्बृहत्कोटिरेकस्य स्यात् स कोणकः॥

एकेति। एकगोलत्रिकोणस्य=कस्यापि चापीयत्रिभुजस्य कोणस्थितैः=कोणत्रयगतैर्बिन्दुभिरभ्रनन्दांशकैर्नवत्यंशैर्यानि मण्डलानि वृत्तानि भवन्ति तद्योगजातं=तेषां मिथः सम्पातैरुत्पन्नं नूतनवृत्त त्रयेण सञ्जातं यत्परं द्वितीयत्रिकोणं त्रिभुजं ते=द्वे त्रिभुजे पण्डितैर्गोलज्ञैर्मिथः स्पर्धिनी परस्परं बृहत्कोटिचापजे कीर्त्तिते=कथिते। एकस्य=त्रिभुजस्य कोणजबृहत्कोटिः=

कोणोनभार्धांशमितः संमुखगः=संमुखस्थः अन्यदोर्द्वितीयत्रिभुजे भुजो भवति। तथा द्वितीयदोर्बृहत्कोटिः=द्वितीयत्रिभुजभुजोनभार्धांशः स एकस्य त्रिभुजस्य कोणकः स्यात्।

भाषार्थ— किसी भी चापीय त्रिभुज के कोण स्थित अर्थात् तीनों कोणों के बिन्दुओं से ९० अंश के जितने वृत्त होते हैं उनके परस्पर योग से उत्पन्न दो त्रिभुजों को विद्वान लोग 'स्पर्धिनी' कहते हैं। एक त्रिभुज का कोण ३६० नक्षत्रांश (भांश) का आधा होता है। अर्थात् १८० होता है। सम्मुख स्थित अन्य भुजाओं वाले दूसरे त्रिभुज में भुज होता है। तथा दूसरे (द्वितीय) त्रिभुज की भुजाओं का १८० अंश (भार्धांश =नक्षत्रार्धांश) ही एक त्रिभुज का कोण होता है।

अथाऽत्र कल्प्यताम्। नतांशलम्बांशद्युज्याचापांशेत्यवयवत्रयात्मक-त्रिभुजस्य कोणगतैः खमध्यध्रुवस्थानग्रहस्थानैस्त्रिभिर्बिन्दुभिर्नवत्यंशेन क्रमेण संजातानि क्षितिजनाड़ीग्रहक्षितिज संज्ञानि वृत्तानि तद्योगजातं यत्त्रिकोणं तथा पूर्वत्रिकोणं चैते मिथः स्पर्धिनी भवतः। अर्थात् प्रथमक्षेत्रस्य खमध्यगकोणोनभार्धांशमितो द्वितीयस्य क्षितिजवृत्तीयभुजस्तथा ध्रुवगकोणोनभार्धांशसमो द्वितीयस्य नाडीवृत्तीयभुज एवं तृतीयोऽपि स्यात्। एवं च भुजोनभार्धांशसमो द्वितीयक्षेत्रे कोणः स्यात् तत्संमुखगत एवेति।

अत्रोपपत्तिः।

अथात्र क्षितिजयाम्योत्तरसंपातात्क्षितिजदृग्वृत्तसंपातावधि यच्चापं तत्खमध्यगतप्रथमत्रिभुजकोणेन समं (गो. क्षे. ३) तथा च क्षितिज-ग्रहक्षितिजयोः संपातबिन्दुः दृग्वृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्रं। एवं नाडीवृत्तक्षितिजवृत्तयोः संपातो याम्योत्तरवृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्रं (गो. प. ६ टि.) अतोऽत्र यदि याम्योत्तरक्षितिजसंपातान्नाडीक्षितिजवृत्तसंपातावधि नवत्यंशमिते चापे क्षितिजयाम्योत्तरसंपातात्क्षितिजदृग्वृत्तसंपातावधि खमध्यगकोणसमं चापं विशोध्यते तदा दृग्वृत्तान्नाड़ीवृत्तावधि क्षितिजवृत्तीयचापः स्यात्। तद्यदि दृग्वृत्तात् ग्रहक्षितिजावधि क्षितिजवृत्तीयचापेन नवत्यंशमितेन युतं तदा नांड़ीक्षितिजसंपाताद्ग्रहक्षितिजपर्यन्तं क्षितिजवृत्तीयभुजमानं द्वितीयत्रिभुजे स्यात्। अतस्तत्स्वरूपं ९०—खमध्यगकोण=चा. अतएव ९०+(९०—खमध्यगको.) = ९०+९० खमगको=१८०—खमगको. = क्षितिजवृत्तीयभुजो द्वितीयत्रिभुजे। एवमेव ध्रुवप्रोतवृत्तनाड़ीवृत्तसंपातात् याम्योत्तरनाडीवृत्तसंपातावधि

ध्रुवगतकोणमानं (गो. रे. क्षे. ३) तत् यदि क्षितिजनाडीवृत्तसंपातात् याम्योत्तरवृत्तावधि नवत्यंशमिते चापे विशोध्यते तदा क्षितिजाद्ध्रुवप्रोतवृत्तावधि नाड़ीवृत्ते स्यात् तद्यदि ध्रुवप्रोतवृत्ताद्ग्रहक्षितिजावधि नवत्यंशमिते योज्यते तदा क्षितिजाद्ग्रहक्षितिजावधि नाड़ीवृत्तीयभुजो भवति द्वितीयत्रिभुजे। अतः ९०–ध्रुवगको=चा। ततः ९०+(९०–ध्रुवगको.) = नाडीवृत्तीयभुज = ९०+९०–ध्रुवगको = १८०–ध्रुवगको.। एवमेव ग्रहगतकोणोनसाशीतिशतसमो ग्रहक्षितिजवृत्तीयभुजः स्यादिति पूर्वयुक्त्या सुप्रसिद्धः मेवात उपपन्नम्।

एवं च लम्बांशोनभार्धांशसमो द्वितीयत्रिभुजे क्षितिजनाड़ीवृत्तोत्पन्नकोणः स्यात्तथा नतांशोनभार्धांशसमो द्वितीयत्रिभुजे क्षितिजग्रहक्षितिजसंपातोत्पन्नकोणः स्यात् एवं तृतीयोपीति।

अत्राप्युपपत्तिः।

इह यदि नाड़ीयाम्योत्तरवृत्तसंपाताद्ध्रुवावधि याम्योत्तरवृत्तीयनवत्यंशमिते चापे लम्बांशमानं शोध्यते तदा खमध्यान्नाड़ीवृत्तावध्यवशिष्यते तच्च यदि खमध्याद्याम्योत्तरक्षितिजसंपातावधि नवत्यंशमिते चापे योज्यते तदा क्षितिजान्नाड़ीवृत्तावधि याम्योत्तरवृत्तीयचापं स्यात्। परं च तदेव नांडीक्षितिजवृत्तोत्पन्नकोणमानं द्वितीयत्रिभुजे (गो. रे. क्षे. ३) अतः ९०+(९०–लंबांश) = १८०–लंबांश = नाड़ीक्षितिजवृत्तोत्पन्नकोणः। एवं सर्वत्रैत्युपपन्नं यथोक्तम्। अथ यदि प्रथमत्रिभुजकोणोनभार्धांशसमो द्वितीयत्रिभुजे भुजस्तदा द्वितीयस्य भुजोनभार्धांशसमः प्रथमत्रिभुजे कोण इति तु प्रसिद्धमेवात उपपन्नं द्वितीयदोर्बृहत्कोटिरित्यादि सर्वम्।

अथ द्वादशं क्षेत्रम् (१२)

गोलत्रिबाहौ कोणानां योगः षट्समकोणतः।
न्यून एव तथा ज्ञेयः समकोणद्वयाधिकः ॥

गोलेति। गोलत्रिबाहौ=गोलीयचापत्रिभुजे कोणानां त्रयाणामपि योगः षट्समकोणतो न्यूनोऽल्प एव। तथा समकोणद्वयाधिकः=साशीतिशतांशादधिको भार्धांशा – (१८०°) दधिको ज्ञेय इति।

भाषार्थ— गोलीय चाप के त्रिभुज में तीनों कोणों का योग षट् समकोण से न्यून ही होता है। तथा दो समकोण से अधिक (१८० अंश से अधिक) जानना चाहिए।

यथाऽत्र कल्प्यताम्—नतांशलम्बांशद्युज्याचापांशेत्यवयवत्रयात्मके चापीयत्रिभुजे (खमध्यध्रुवग्रहगत कोणत्रय योगः) त्रयाणां कोणानां योगः षट्समकोणतोऽल्पः न्यूनः तथा समकोणद्वयाधिकश्च स्यादिति॥

अत्रोपपत्तिः।

अथात्र "एकगोलत्रिकोणस्य कोणस्थितैरित्यादिना यदन्यत्त्रिकोणं जायते तत्र प्रथमत्रिकोणस्य कोणोनभार्धांशसमो भुजो भवतीति प्रसिद्धन्तावत्। अतएव १८०—खमगको=प्रभु। एवं १८०—ध्रुवको=द्विभु" तथा १८०—प्रगको=तृभु। परञ्च त्रिभुजे त्रयाणामपि भुजानां योगः खरसाग्निभागादल्पः (गो. रे. क्षे. ·८) अतः पूर्वप्रतिपादितस्वरुपाणां योगः खरसाग्नितोऽल्पस्तथाहि ५४०—कोणयो ∠३६० अतः ५४०—३६० कोणयो अतएव ∠१८० कोणयो। अतः साशीतिशताधिक एवं संपन्न इति। अथ द्वाभ्यां वृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणस्य साशीतिशताऽल्पत्वात्रिभुजे त्रयोऽपि कोणाः प्रत्येकं साशीतिशतादल्पोऽतएव तेषां त्रयाणां योगः षट्समकोणादल्प इत्यपि परिचितमेवेत्युपपन्नं यथोक्तम्।

अथ त्रयोदशं क्षेत्रम् (१३)

स्वध्रुवान्येष्टबिन्दोः स्ववृत्तावधि
स्युर्हि चापानि यानीह तेषां भवेत्।
इष्टबिन्दोर्गतं नैजवृत्तध्रुवे
चापमेवाधिकं सर्वचापोन्मितेः॥
तद्बृहत्कोटिचापं तु सर्वाल्पकं
चोरुकोदण्डतो दूरचापोन्मितेः।
यत्समीपस्थचापं तदेवाधिकं
गोलपृष्ठेऽवगम्यं सुधीभिः सदा॥

स्वध्रुवेति। गोलपृष्ठे स्वध्रुवान्येष्टबिन्दोः = वृत्त (निज) पृष्ठीय-केन्द्रेतरविन्दोः स्ववृत्तावधि यानि चापानि, तेषां मध्ये इष्टबिन्दोर्नैजवृत्तध्रुवे गतं चापमेव सर्वचापोन्मितेरधिकम्, तद्बृहत्कोटिचापं तदूनभार्धांशचापं तु सर्वाल्पकम्। तथा च उरुकोदण्डतः सर्वाधिकचापमानाद्दूरचापोन्मितेर्दूरगत-चापमानात्समीपस्थचापं यत्तदेव सुधीभिः सदाऽधिकमवगम्यमिति।

भाषार्थ— गोलपृष्ठ में अपने ध्रुव से इष्ट बिन्दु के अपने वृत्त पर्यन्त जितने चाप हैं उनके मध्य में इष्ट बिन्दु के अपने याम्योत्तर वृत्त ध्रुव में गये हुये चाप का मान समस्त चापों से अधिक होता है। उस बृहद् कोटि के चाप से कम अर्थात् नक्षत्रार्धांश (भार्धांश) १८० से कम होगा। और उरु को दण्ड से सर्वाधिक चाप मान से दूर और दूरगत (दूरस्थ) चापमान से समीपस्थ चाप का मान सदा अधिक ही जानना चाहिए गणकों को।

यथाऽत्र कल्प्यताम्। नाडीवृत्तस्योत्तरसमस्थानरुपादध्रुवान्येष्टविन्दोर्नाड़ीवृत्तावधि कृतानि यानि समप्रोतवृत्तीयचापानि तेषां मध्ये ध्रुवगतयाम्योत्तरवृत्तीयचापमानं सर्वाधिकं स्यात्तथा समस्थानान्निरक्षाधः खमध्यावधि याम्योत्तरवृत्तीयचापं सर्वाल्पकं स्यात्। तथाच ध्रुवगतयाम्योत्तरवृत्तीयबृहच्चापस्य समीपे यच्चापं तद्दूरस्थचापादधिकमिति।

अत्रोपपत्तिः।

अथात्र समप्रोतवृत्तानि नाडीवृत्ते यत्र यत्र लग्नानि तत्र तत्र ध्रुवप्रोतवृत्तानि कार्याणि। तथासति ध्रुवानाडीवृत्तावधि नवत्यंशमित एकोऽवयवः समप्रोतवृत्ते द्वितीयः याम्योत्तरवृत्ते ध्रुवसमस्थानान्तरमक्षांशरूपं चापं तृतीयः इत्येतादृशे चापीयत्रिभुजे ध्रुवप्रोतवृत्तीयनवत्यंशमितस्य याम्योत्तरवृत्तीयाक्षांशरूपस्य च योगः समप्रोतवृत्तीयभुजादधिकः (गो. रे. क्षे.७) परश्चात्र ध्रुवप्रोतवृत्तीयनवत्यंशचापं ध्रुवान्नाडीवृत्तावधि याम्योत्तरवृत्तीयचापेन समम्। अतएव समस्थानान्नाड़ीवृत्तावधि याम्योत्तरवृत्तीयचापं समप्रोतवृत्तीयचापादधिकमेवं सर्वत्रेति। एवंच पूर्वप्रतिपादितत्रिभुजे समप्रोतवृत्तीयभुजयाम्योत्तरवृत्तीय भुजयोर्योगो ध्रुवप्रोतवृत्तीयभुजादधिकः (गो.रे.क्षे. ७) परं चात्र ध्रुवप्रोतवृत्तीय भुजोध्रुवान्निरक्षाधः खमध्यावधि याम्योत्तरवृत्तीयचापसमः अतएवोभयोर्याम्योत्तरवृत्तीयाक्षांशमितचापस्य शोधनेन न्यूनाधिकत्वं तथैवातः समस्थानान्निरक्षाधः खमध्यावधि याम्योत्तरवृत्तीयचापं समप्रोतवृत्तीयचापादल्पेवं सर्वत्रेति। अथ ध्रुवगतयाम्योत्तरवृत्तीयचापस्य सर्वाधिकस्य समीपे यत्समप्रोतवृत्तं तत्प्रथमं तथा दूरे यत्तदन्याख्यं कल्प्यं तथा तन्नाड़ीवृत्तसम्पातनिष्ठाध्रुवप्रोतवृत्तद्वयं च तथैव प्रथमान्याख्यं ज्ञेयम्। अथ प्रथमध्रुवप्रोतवृत्तनाड़ीवृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणो द्वितीयध्रुवप्रोतवृत्तनाड़ीवृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणेन समः (गो. रे. क्षे. ५) अतः प्रथमध्रुवप्रोतस्य बाह्यगतत्वात् द्वितीयध्रुवप्रोतस्य नाड़ीसमप्रोतवृत्तयोरन्तर्गतत्वाच्च प्रथमसमप्रोतवृत्तनाड़ीवृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणो द्वितीयसमप्रोतवृत्तनाड़ीवृत्ताभ्यामुत्पन्न-

कोणादल्पोऽत एव समप्रोतवृत्तद्वयेऽवयवद्वयं नाड़ीवृत्ते तृतीय इत्यस्मिन् त्र्यस्रे लघुकोणसंमुखगतो द्वितीयसमप्रोतवृत्तीयचापः प्रथमसमप्रोतवृत्तीयचापाद्-बृहत्कोणसंमुखगतादल्पः स्यात् (गो. रे. क्षे. ९) इत्युपपन्न यथोक्तम्।

अथ चतुर्दशं क्षेत्रम् (१४)

चापजात्ये भुजस्तुर्यभागाल्पकः
संमुखस्तस्य कोणोऽपि तुर्याल्पकः।
एवमभ्राङ्कभागाधिकश्चेद्भुजः
संमुखस्तस्य कोणोऽपि खाङ्काधिकः॥

चापजात्य इति। चापजात्ये गोलीयजात्यत्रिभुजे यदि भुजस्तुर्यभागाल्पको = नवत्यंशाल्पस्तदा तस्य= तस्य संमुखः कोणोऽपि तुर्याल्पको=नवत्यंशाल्पकः स्यात्। एवं भुजश्चेदभ्राङ्कभागाधिको नवत्यंशाधिकस्तदा तस्य संमुख कोणोऽपि खाङ्काधिको = नवत्यंशाधिको भवतीति। अर्थात् ये भुजा नवत्यंशाल्पास्तत्सम्मुखकोणा अपि नवत्यंशाल्पा। एवञ्च ये भुजा नवत्यंशाधिकास्तत्समुखकोणा नवत्यंशाधिका भवन्ति।

भाषार्थ— चापजात्य में (गोलीय त्रिभुज में) यदि भुज नब्बे (नवति=९०°) अंश से कम हो तब उसके सम्मुख के चाप का कोण भी नब्बे अंश से कम ही होगा। इस प्रकार से भुज यदि ९०° नब्बे अंश से अधिक हो तो उसके सामने का कोण भी नब्बे अंश ९०° से अधिक ही होता है।

यथात्र कल्प्यताम्। विषवांशभुजांशक्रान्त्यंशेत्यवयवत्रयात्मके चापजात्ये यदि नाड़ीवृत्तीयविषुवांशमानं नवत्यंशाल्पं तदा तत्संमुखगतः क्रान्ति-ध्रुवप्रोतवृत्ताभ्यामुत्पन्नकोणोऽपि नवत्यंशाल्पः स्यात्। यदि विषुवांशमानं नवत्यंशाधिकं तदा तत्संमुखकोणोऽपि नवत्यंशाधिक एवेति।

अत्रोपपत्तिः।

यद्येवं न तदा कल्प्यतां नाडीवृत्तीयविषुवांशमानस्य नवत्यंशाल्पे तत्संमुखकोणो नवत्यंशसमस्ततोऽधिको वा स्यात्। यदि क्रान्ति-वृत्तध्रुवप्रोत-वृत्तोत्पन्नकोणो नवत्यंशसमस्तदा क्रान्तिवृत्तं ध्रुवप्रोतवृत्तस्य पृष्ठीय केन्द्रे यास्यति, तथा नाड़ीवृत्तं च (गो. क्षे.१ अ. ६) अतः क्रान्तिनाड़ीवृत्तसंपातो

ध्रुवप्रोतवृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्रमतो विषुवांशमानं नवत्यंशसमं जातम्। परमिदमसंगतं पूर्वं नवत्यंशाल्पकल्पनात्। एवं यदि क्रान्तिध्रुवप्रोतवृत्तोत्पन्नकोणः नवत्यंशाधिकः कल्प्यते तदा क्रान्तिध्रुवप्रोतसंपातबिन्दौ ध्रुवप्रोतवृत्तेन सह नवत्यंशतुल्यकोणोत्पादकं वृत्तमेकं कार्यम् तन्नाड़ीवृत्ते विषुवांशान्तरे एव संयोगं करिष्यति। तस्य क्रान्तिध्रुवप्रोतवृत्तयोरन्तर्गतत्वात्। अतो यत्र लग्नं तस्माद्विषुवांशाग्रावधि नाड़ीवृत्तीयचापं नवत्यंशसमं भविष्यति पूर्वप्रतिपादितयुक्त्या। अतोऽत्र विषुवांशखण्डस्य नवत्यंशसमत्वात् पूर्वं तु नवत्यंशाल्पकल्पनादीदृशी कल्पनाऽपि न समीचीना। अत उक्तमेव तथ्यम्। अर्थात् भुजस्य नवत्यंशाल्पे तत्समुखकोणोऽपि नवत्यंशाल्प एवेति। एवं यदा विषुवांशमानं नवत्यंशाधिकं तदा तत्संमुखकोणोऽपि नवत्यंशाधिकः। अत्र विषुवांशस्य नवत्यंशाधिकत्वे नाडीक्रान्तिवृत्तयोर्द्वितीयसंपाताद्यद्विषुवांशमानं तन्नवत्यंशाल्पमेव। अतः पूर्वप्रतिपादितयुक्त्या नवत्यंशाल्पविषुवांशसंमुखगतकोणो ध्रुवप्रोतक्रान्तिवृत्ताभ्यामुत्पन्नो द्वितीयपार्श्वगतो नवत्यंशाल्प एव स्यात्। तस्मिन् साशीतिशताच्छोधिते अभीष्टत्रिभुजे क्रान्तिध्रुवप्रोतवृत्तोत्पन्नकोणः स्यादतो नवत्यंशाल्पस्य साशीतिशताच्छोधनेन नवत्यंशाधिक एवावशिष्यते। इत्यतो विषुवांशस्य नवत्यंशाधिकत्वे तत्संमुखकोणोऽपि नवत्यंशाधिक एव सिद्ध इत्युपपन्नं यथोक्तम्।

अथ पञ्चदशं क्षेत्रम् (१५)

यदा खाङ्कभागाल्पको वाऽधिकौ तौ
भुजौ कर्णचापं तदा खाङ्कतोऽल्पम्।
यदैको नवत्यंशतोऽल्पोऽधिकोऽन्य-
स्तदाचापजात्ये श्रुतिः खाङ्कगुर्वी ॥

यदेति। यदा चापजात्ये=गोलीयचापत्रिभुजे तौ भुजो खाङ्कभागाल्पकं नवत्यंशाल्पौ वा अधिकौ नवत्यंशाधिकौ तदा कर्णचापं खाङ्कतोऽल्पं = नवत्यंशाल्पं स्यात्। यदा च एको भुजो नवत्यंशतोऽल्पस्तथा अन्यो भुजः अधिको नवत्यधिकस्तदा श्रुतिः कर्णः खाङ्कगुर्वी नवत्यधिका भवतीति।

भाषार्थ— जब गोलीय चाप के त्रिभुज में दोनों भुजाएं खाङ्कभाग अर्थात् नब्बे अंश (९०°) से कम अथवा अधिक (ज्यादा) हो तो कर्ण

का चाप नब्बे अंश (९०°) से कम होगा। यदि एक भुज नब्बे (९०°) अंश से कम तथा दूसरा भुज नब्बे (९०°) अंश से अधिक हो तो नब्बे (९०°) अंश से अधिक वाला कर्ण (श्रुति) कहलाता है।

यथाऽत्र कल्प्यताम्। पूर्वापरवृत्ते पूर्वस्वस्तिकादुपरि समप्रवेशाख्यविन्दौ ध्रुवप्रोतवृत्तं कार्यम् तदा खमध्यात्समप्रवेशचिह्नावधिपूर्वापरवृत्ते एको भुजस्तथोत्तरध्रुवावधि याम्योत्तर वृत्ते लम्बांशमितो द्वितीयो भुजः। ध्रुवप्रोतवृत्ते कर्णसंज्ञक इत्यत्र चापजात्ये। भुजयोर्नवत्यल्पत्वात् कर्णमानं नवत्यल्पमेव भवितुमर्हति।

अत्रोपपत्तिः।

अथात्र पूर्वापरवृत्तीयभुजस्य नवत्यंशाऽल्पत्वात् समप्रवेशाधः कुत्रापि पूर्वस्वस्तिक रूपबिन्दौ याम्योत्तरवृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्रं स्यादतस्तस्माद्ध्रुवावधि वृत्तमुन्मण्डलरूपं कार्यम् तदा पूर्वस्वस्तिकाद्ध्रुवावधि नवत्यंशमितमुन्मण्डलीय-चापमानं ध्रुवप्रोतवृत्तीयकर्णचापादधिकं (गो. रे. क्षे. १३) अतः कर्णचापं नवत्यंशाल्पमेव जातमिति।

एवं यद्यधःखमध्यात् समप्रवेशाचिन्हावधि पूर्वापरवृत्तीयभुजो नवत्यधिकस्तथाध्रुवावधि याम्योत्तरवृत्तीयभुजश्च नवत्यधिकस्तदापि ध्रुवप्रोतवृत्तीयकर्णमानं नवत्यंशाऽल्पमेवेति।

अत्रोपपत्तिः।

अत्रापि पूर्ववदेव ध्रुवोपरि याम्योत्तरवृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्रप्रोतवृत्तं कृत्वा नवत्यंशमिततद्वृत्तीयचापं कर्णमानादधिकं सिध्यति (गो. रे. क्षे. १३) अतोऽत्रापि कर्णचापं नवत्यंशाऽल्पमेवेति ॥ अथ च कल्प्यताम् पूर्वस्वस्तिका-दधः क्वापि पूर्वापरवृत्ते बिन्दुं विधाय तदुपरि यदि ध्रुवप्रोतवृत्तं क्रियते तदा खमध्यादुत्तरध्रुवावधि याम्योत्तरवृत्तीयभुजस्यनवत्यल्पत्वात्तथा खमध्यादिष्ट-चिन्हावधि पूर्वापरवृत्तीयस्य च भुजस्य नवत्यधिकत्वाद्ध्रुवप्रोतवृत्तीयकर्णचापं नवत्यंशाधिकमेव भविष्यतीति।

अत्रोपपत्तिः।

अथात्र पूर्वापरवृत्तीयभुजस्य नवत्यधिकत्वाद्याम्योत्तरवृत्तस्य पृष्ठीय-केन्द्रमिष्टबिन्दौरुपर्य्येव कुत्रापि पूर्वस्वस्तिकरूपबिन्दौ भविष्यति। अतोऽत्र पूर्वस्वस्तिकादुत्तरध्रुवावधि कृतं चापं नवत्यंशमितं ध्रुवप्रोतवृत्तीयकर्णचापादल्पं

पूर्वापरवृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्रगतयाम्योत्तरवृत्तीयसर्वाधिकखण्डस्य दूरस्थितत्वात् (गो. रे. क्षे. १३) अतः कर्णचापं नवत्यधिकं जातमत उपपन्नं यथोक्तमिति।

अत्रानुमानम्—

यदा कर्णस्तुर्यादधिकस्तदा भुजौ भिन्नगुणौ एवं कर्णस्य तुर्याल्पत्वे भुजावेकगुणौ भवतः।

भाषार्थः—

यदि कर्ण नब्बे से ज्यादा हो तो उसका भुज भिन्न गुणी तथा कर्ण के नब्बे से न्यून (कम) होने पर भुज एक गुणी होता है।

द्वितीयानुमानम्—

कर्णस्य तुर्याधिकत्वे कोणौ भिन्नगुणौ तथा कर्णस्य तुर्याऽल्पत्वे कोणावेकगुणौ भवतः।

भाषार्थः—

यदि कर्ण के नब्बे से अधिक होने पर कोण भिन्न गुणी होगा। तथा कर्ण के नब्बे से कम होने पर कोण भी एक गुणी होगा।

अथ षोडशं क्षेत्रम् (१६)

अन्तर्लम्बे चापत्र्यस्रे भूसंलग्नौ खाङ्काल्पौ स्तः।
खाङ्कोरू वा कोणौ चाथो बाह्ये लम्बे खाङ्काल्पोरू॥

अन्तर्लम्ब इति। अन्तर्लम्बे चापत्र्यस्रे चापीयत्रिभुजे भूसंलग्नावाधार-संगतौ कोणौ खाङ्काल्पौ नवत्यंशाल्पौ वा खाङ्कोरु = नवत्यधिकौ चाऽस्तः भवतः। अथो बाह्ये लम्बे खाङ्काल्पोरु = नवत्यल्पाऽधिकौ स्यातामिति।

यथाऽत्र कल्प्यताम्। नतांशलम्बांशद्युज्याचापांशेत्त्वयवत्रयविशिष्टे चापीयत्रिभुजे खमध्याद्ध्रुवप्रोतवृत्तीयद्युज्याचापरूपाधारे कृतो लम्बस्त्रि-भुजान्तर्गतस्तदा ग्रहसंलग्नकोणो ध्रुवगतकोणश्चेति द्वौ लम्बस्य नवत्यंशाल्पा-(धिकत्वे) वुतनवत्यंशाधिकौ नवत्यंशाल्पाधिकौ स्याताम्।

भाषार्थः—

यदि भू संलग्न आधारगत कोण एक गुणी हो तो आधार के अन्तर्गत लम्ब का पात होगा। इसी प्रकार उस आधारगत कोण के भिन्न गुणी होने पर उस आधार के बाहरी भाग में लम्ब का पात होगा ऐसा जाने।

अत्रोपपत्तिः।

अथात्र यदि लम्बमानं नवत्यंशाल्पं तदा लम्बोभयतः स्थितयोश्चापजात्ययोः "चापजात्ये भुजतुर्यभागाल्पकः" इत्यादि चतुर्दशक्षेत्रानुसारेण ग्रहगतध्रुवगतकोणौ नवत्यंशाल्पौ स्याताम्। यदि च लम्बमानं नवत्यधिकं तदा तथैव युक्त्या कोणौ नवत्यधिकाविति प्रसिद्धमेव गोलनिपुणानाम्।

अथ यदि पूर्वप्रतिपादितचापीयत्रिभुजे बहिर्लम्बपातस्तदैकः कोणो नवत्यधिकः। अन्यश्च नवत्यल्प इति।

अत्रोपपत्तिः।

अथात्र यदि बहिर्लम्बमानं नवत्यल्पं तदा चतुर्दशक्षेत्रानुसारेण ध्रुवगतकोणमानं नवत्यंशाल्पं स्यात्। तथा ग्रहस्थानसंलग्नकोणो दक्षिणदिग्गतो नवत्यंशाल्पः। अतस्तदूनभार्धांशमितोऽभीष्टकोणो नवत्यधिकः स्यात्। एवं च यदि बहिर्लम्बमानं नवत्यधिकं तदा चतुर्दश क्षेत्रेणैव ध्रुवगतकोणो ग्रहगतबहिःकोणश्च नवत्यधिकः स्यात्। अतएव तदूनभार्धांशमितो ग्रहगताभीष्टकोणो नवत्यल्पः स्यात्। अत उक्तं बाह्ये लम्बे खाङ्काल्पोरु इति।

(१) अनुमानम्।

यदाधारगतौ कोणावेकगुणौ तदा आधारान्तर्लम्बपातः स्यात्। एवं तावाधारगतौ कोणौ भिन्नगुणौ तदाधारद्बहिर्लम्बपतनं बोध्यमिति।

अथ सप्तदशं क्षेत्रम् (१७)

भूमेरल्पविवर्धनेन गदितो लम्बः समीपाभिध-
स्तज्जा लघ्ववधा भुवेल्लघुभुजे लग्ना परं दोर्युतिः।
वृत्तार्धाल्पमिताथ दोर्युगयुतिः खाष्टेन्दुभागाधिका।
सा लध्वीत्ववधा बृहद्भुजगता या प्रोक्तलम्बाश्रिता ॥

भूमेरिति। भूमेराधारस्याल्पविवर्धनेन समीपाभिधो लम्बो गदितः=कथितः तज्जा तदुत्पन्ना लध्ववधा अल्पाबाधा लघुभुजे लग्ना भवेत्। परं यदि दोर्युतिर्भुजद्वययुतिर्वृत्तार्धाल्पमिता साशीतिशताल्पाभार्धांशाल्पा। अथ यदि दोर्युगयुतिः भुजद्वययोगः खाष्टेन्दुभागाधिकाभार्धांशाधिका तदा सा लघ्वी अथवा तु बृहद्भुजगता या प्रोक्तलम्बाश्रितेति।

भाषार्थ— भूमी के अर्थात् आधार रेखा के थोडे से बढ़ने पर उस रेखा को लम्ब रेखा कहा गया। उससे लघु रेखा संयुत होनी चाहिए, लेकिन यदि भुज द्वय (दो भुजाओं) की युति (योग) उस वृत से आधी अर्थात् १८० होनी चाहिए। यदि दोनों भुजाओं (भुजद्वय) की युति १८० (वृत्तार्ध) अंश से अधिक हो तो तब वह लघु भुजा कहलायेगी। तथा बृहद् (बड़ी) भुजा को लम्बाश्रित कहा गया है।

यथाऽत्र कल्प्यताम्। नतांशलम्बांशद्युज्याचापांशेत्यवयवत्रयात्मके चापीयत्रिभुजे खमध्यरूपभुजद्वययोगबिन्दुतो द्युज्याचापांशरूपभूमौ लम्बोत्पादनेन या लध्वाबाधा स नतांशलम्बांशयोर्योऽल्पस्तल्लग्ना स्यात्। एवं नतांशलम्बांशयोर्योगस्य वृत्तार्धाल्पत्वे ज्ञेयम्। तदधिके च सा लध्वाबाधा बृहद्भुजगता।

अत्रोपपत्तिः।

अथात्र ध्रुवप्रोतवृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्रेतरबिन्दुरूपात् खमध्याल्लम्बवृत्तीय-चापमानमकेन्द्रगतं यत्तस्मात्समीपभुजो लघुर्दूरतश्च महान्। अतएव बृहद्भुजगताऽवाधा बृहती लघुभुजगताचाबाधा लध्वी विलोमसिद्धान्तेन (गो. क्षे. १३) परमत्र खमध्याद्ध्रुवप्रोतवृत्तदिग्वृत्तयो द्वितीयसम्पातावधि दृग्वृत्तीयचापस्य तथा नतांशचापस्य च योगः साशीतिशतसमः। अथ च तद्दृग्वृत्तीयचापाल्लम्बवृत्तसमीपस्थाल्लम्बांशचापं दूरगतं चाल्पम् । (गो. क्षे. १३) अतोऽत्र नतांशलम्बांशयोगः साशीतिशताल्पो जातः। अथ नतांशोनभार्धांशसमखमध्याद्ध्रुवप्रोतदृग्वृत्तयोर्द्वितीयसंपातावधि एकोऽवयवस्तथा लम्बांशोनभार्धांशसमः खमध्याद्दक्षिणध्रुवावधि द्वितीयः। एवं द्युज्याचापांशोनभार्द्धांशसमो दक्षिणध्रुवाद्ध्रुवप्रोतदृग्वृत्तयोर्द्वितीयसंपातावधि-भूमिस्तृतीयः। एतादृशे चापीयत्रिभुजे लम्बवृत्तं तदेव परमत्रलम्बरूपस्य खण्डस्य ध्रुवप्रोतवृत्तस्य केन्द्रगतत्वात् समीपस्थो भुजश्चाधिकः स्यात्तथा दूरगतो लघुः (गो. क्षे. १३) अतोऽत्र विलोमेन बृहद्भुजगताऽवाधाऽल्पा लघुभुजगता महती जाता। परमत्र पूर्वं नतांशलम्बांशयोर्योगस्य वृत्तार्धाल्पदर्शनात्तदून-भार्धांशरूपयोर्भुजयोर्योगोऽत्र वृत्तार्धाधिक एवेत्युपपन्नम्। एवं द्वितीयध्रुवात्क्षेत्रं तत्त्रिज्यावृत्तत्रयोत्पन्नं गृहीत्वा बहिर्लम्बेऽपि सैव वासना ज्ञेयेति।

अथाऽष्टादशं क्षेत्रम् (१८)

लघूरुवृत्ते बृहदन्यवृत्तद्वयध्रुवस्थानविलग्नके ये।
तदन्तरस्थे बृहदन्यवृत्तद्वयस्य चापे भवतः समाने॥

लघ्विति। बृहदन्यवृत्तद्वयध्रुवस्थानविलग्नके = अन्यमहद्वृत्तद्वय-पृष्ठीयकेन्द्रगते ये लघूरुवृते लघुमहद्वृत्ते तदन्तरस्थे=तयोर्लघुमहद्वृत्तयोरन्तर्गते बृहदन्यवृत्तद्वयस्य = अन्यमहद्वृत्तद्वयस्य चापे समाने=तुल्ये भवत इति। अर्थाद् गोले यदि द्वे लघुमहद्वृत्तेऽन्य महद्वृत्तयोर्ध्रुवगते तदा लघुबृहद्वृत्तयोरन्तरगेऽन्य-वृत्तद्वयचापे समाने भवतः।

भाषार्थ— अन्य बृहद् वृतद्वय ध्रुव (केन्द्र) स्थान में गये हुए अन्य बड़े वृत्त में जो लघु और बृहद् वृत्त उन दोनों लघु और बृहद् वृत्त के अन्तर्गतबृहद् और (अन्य) लघु वृत्त के चाप समान होंगे।

यथात्र कल्प्यताम्—स्वखमध्यस्वनिरक्षखमध्ययोर्मध्यवर्तिपलांशदलबिन्दुतः पलांशदलकोट्यंशमितेन चापेन कृतं लघुवृत्तमुत्तरध्रुवस्थानरूपे नाडीवृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्रे तथा च दक्षिणसमस्थानरूपे पूर्वापरस्य पृष्ठीयकेन्द्रे संलग्नं स्यात्। तथा याम्योत्तरवृत्तमपि बृहद्वृत्ताख्यं तयोः पृष्ठीयकेन्द्रगतमतो याम्योत्तरलघुवृत्तयोरन्तर्गते पूर्वापरनाड़ीवृत्तयोश्चापे समे स्यातामिति॥

अत्रोपपत्तिः।

अथात्राक्षांशदलबिन्दुतो नवत्यंशेन यद्वृत्तं तदक्षांशदलमण्डलाख्यं ज्ञेयम्। तच्च ध्रुवसमस्थानयोरन्तर्वर्ति पलांशचापार्धबिन्दौ नाडीपूर्वापरसम्पातरूपे पूर्वपश्चिमस्वस्तिके च यास्यतीति प्रसिद्धमेव। अथ लघु वृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्ररूपात्पलांशदलबिन्दुतो नाड़ीवृत्तलघुवृत्तयोः सम्पातोपरि गतं महद्वृत्तं प्रथमाख्यं कार्यं तथा तस्मादेव पूर्वापरलघुवृत्तयोः सम्पातगतं महद्वृत्तं द्वितीयाख्यं च कार्यम्। तथा लघुवृत्तपूर्वापरवृत्तसम्पातात्पलांशदलमण्डलावधि द्वितीयमहद्वृत्तीयचापं तथा नाड़ी लघुवृत्तसम्पातात्पलांशदलमण्डलावधि प्रथमहद्वृत्तीयचापं च सममेव लघुवृत्तपलांशदलमण्डलयोः समान्तरत्वात्। प्रथमद्वितीयमहद्वृत्तयोः पृष्ठीयकेन्द्रगतत्वाच्च। अथ गोलकेन्द्रात्पलांशदल-मण्डलप्रथममहद्वृत्तयोः सम्पातगतत्रिज्यारेखायां नाड़ीलघुवृत्तयोः सम्पाताल्लम्बः कार्यः, सा प्रथमज्येति ज्ञेयां तथा तस्मादेव बिन्दोः पूर्वापरसूत्रे लम्वः कार्यः,

सा पूर्वस्वस्तिकावधिनाड़ीवृत्तीयचापज्या स्यातथा तयोर्मूलगता रेखा पलांशदलमण्डलधरातलगता कार्या तदा त्रिभुजमेकं जातम्। एवं च पूर्वापरलघुवृत्तसम्पातादपि लम्बकरणेन द्वितीयज्यापूर्वापरवृत्तीयचापज्याबद्धरेखाभिः त्रिभिः क्षेत्रं जायते। अत्र प्रथमज्यारेखा पलांशदलमण्डलधरातले लम्बरुपा (अ. ११ प. १) अतो बद्धरेखा प्रथमज्याभ्यामुत्पन्नकोणः समकोणः स्यात् तथा प्रथमज्यायाः पलांशदलमण्डलधरातले लम्बरुपत्वाद्बद्धरेखा पूर्वापरसूत्रे लम्बरुपास्यात् एकादशाध्यायैकादशक्षेत्रस्य लम्बकरणपरिभाषया। अतएव बद्धरेखानाडीवृत्ताय चापज्याभ्यामुत्पन्नकोणः पलांशदलमण्डलनाडी-वृत्तयोर्धरातलोत्पन्नः (११ अ. प. ४) एवमेव द्वितीयत्रिभुजेऽप्येकः कोणः समकोणस्तथा पूर्वापरवृत्तीयचापज्याद्वितीयबद्धरेखाभ्यामुत्पन्नकोणः स्यात्। परमत्र धरातलोत्पन्नकोणो वृत्तोत्पन्नकोणेन समः (गो. रे. प. ७) तथा नाडीपलांशदलमण्डलाभ्यामुत्पन्नकोणः पलांशार्धकोटितुल्यः पूर्वापरलांशदल-मण्डलाभ्यामुत्पन्नकोणेन पलांशार्धकोटितुल्येन समः। अतस्त्रिभुजयो-र्बद्धरेखानाड़ीवृत्तीयज्याभ्यामुत्पन्नकोणो द्वितीयबद्धरेखापूर्वापरवृत्तीयज्याभ्यामुत्पन्न-कोणेन समः। एकैकः समकोणस्तथा प्रथमज्या द्वितीयज्यया समा तच्चापयोः पूर्वमेव समत्वदर्शनादतः क्षेत्रद्वयं समानं (अ. १ क्षे. २६) अतो नाडीवृत्तीयचापज्या पूर्वापरवृत्तीयचापज्यया समा। अतः लघुवृत्तनाडीवृत्त-सम्पातात्पूर्वस्वस्तिकावधि न्नाडीवृत्तीयचापं लघुवृत्तपूर्वापरवृत्तसम्पातात्पूर्व-स्वस्तिकावधि पूर्वापरवृत्तीयचापेनसममतएव तत्कोटिरूपे लघुवृत्तयाम्योत्तर-वृत्तान्तर्गते नाडीपूर्वापरवृत्तीयचापेऽपि समे संजाते* अत उपपन्नम् यथोक्तमित्यलम्।

श्रीचन्द्रशेखरसुधीपरिनिर्मितायां, विद्वच्चकोरगणलोचनचन्द्रिकायाम्।
दोषाम्बुदैरहितसद्विवृतौ सुगोल, रेखाप्रजातगणितं परिपूर्तिमागान्॥

इति 'श्रोत्रिय' कुलावतंस पं.श्रीसीताराम शास्त्री
आत्मज डॉ. भास्कर शर्मा 'श्रोत्रिय'
विरचित शची नामक टीकान्तर्गत
गोलीयरेखागणित समाप्त।

✻ इति शुभम् ✻

क्षेत्र सं. १

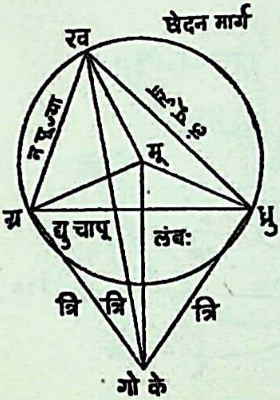

क्षेत्र सं. ४

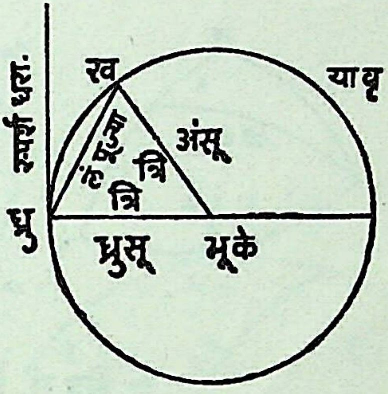

क्षेत्र सं. ५

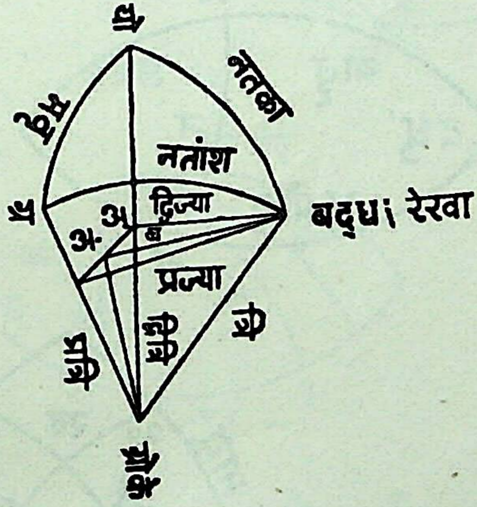

क्षेत्र सं. ८

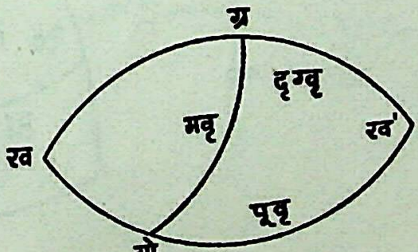

क्षेत्र सं. ९

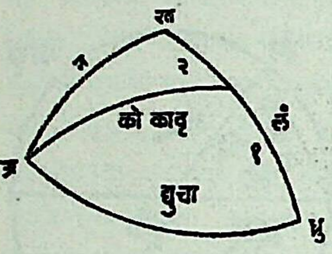

क्षेत्र सं. १०

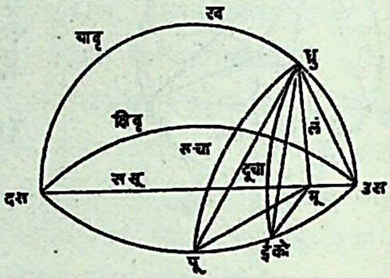

क्षेत्र सं. ११

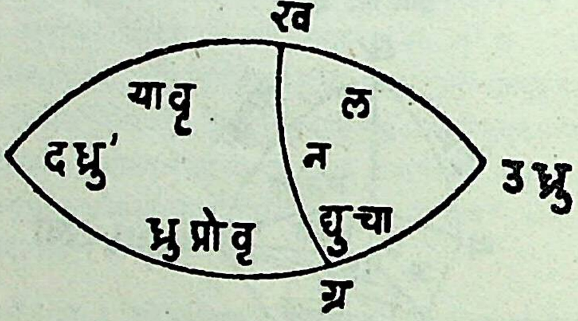

क्षेत्र सं. १२

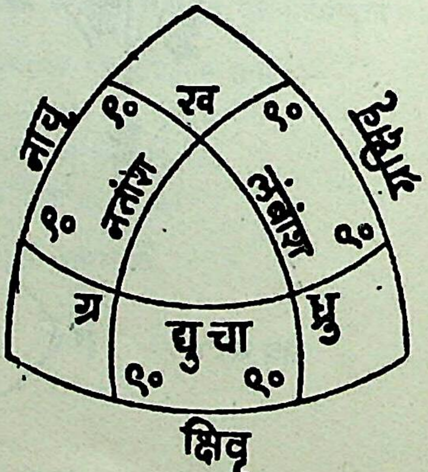

क्षेत्र सं. १३

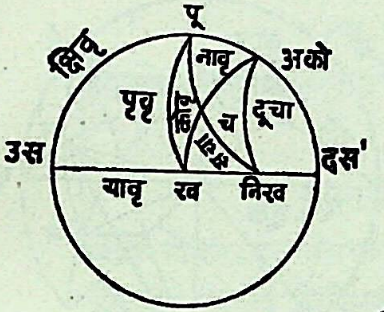

क्षेत्र सं. १४

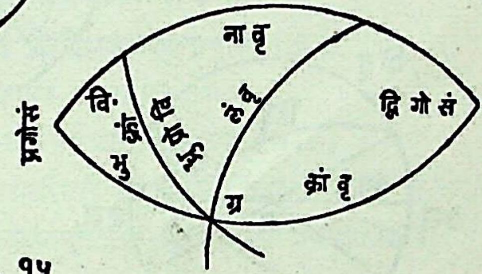

क्षेत्र सं. १५

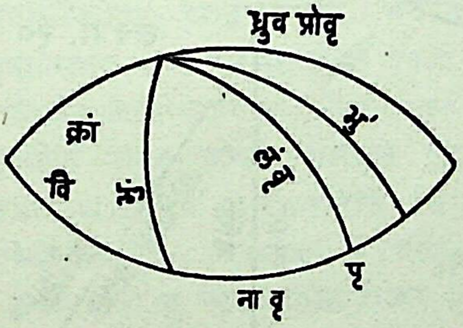

क्षेत्र सं. १६

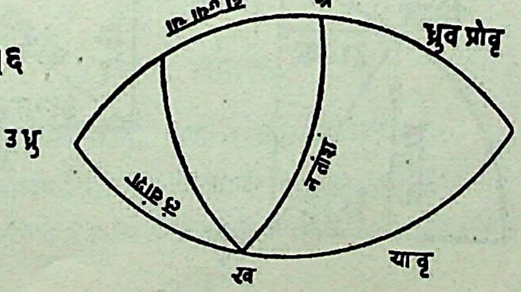

क्षेत्र सं. १८

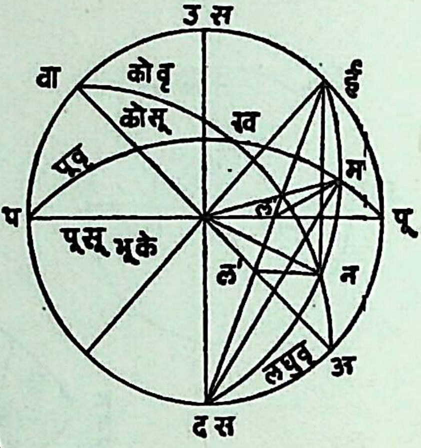

क्षेत्र सं. १७

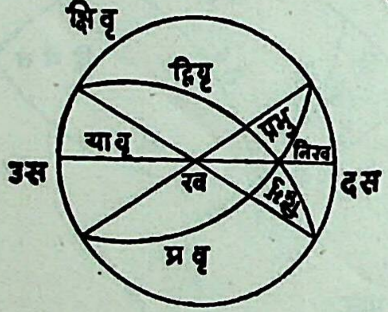

क्षेत्र सं. २०

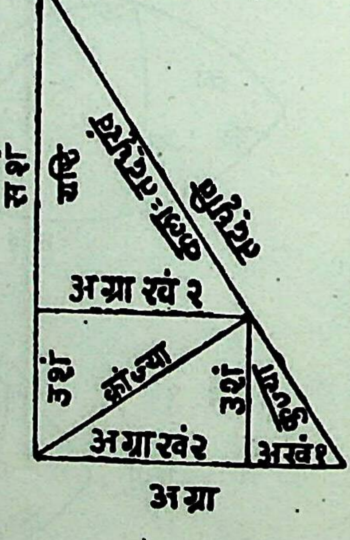

क्षेत्र सं. १९

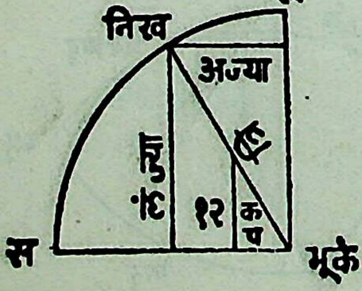

अथ

विशेषोक्तगोलीयरेखागणितम्

तत्र परिभाषाः–

व्यासस्योपरि वृत्तार्धभ्रमणेन समन्ततः।
गोलसंज्ञं घनक्षेत्रं विद्भिस्तत्समुदाहृतम् ॥१॥

नीलाम्बरीयरेखागणित इयमेव प्रथमा परिभाषा।

गोलपृष्ठे सदा स्यातां संपातौ वृत्तयोर्द्वयोः।
महतोः खाष्टचन्द्रांशान्तरितौ गोलवित्! स्फुटौ ॥२॥

इयं परिभाषा नीलाम्बरीयगोलीयरेखागणितस्य प्रथमप्रतिज्ञायाः प्रथमानुमानवदस्ति।

वृत्तयोरैक्यतः खाङ्कभागैर्वृत्तं भवेद्धि यत्।
वृत्तयोस्तस्य खण्डं यत् स कोणो वृत्तजो भवेत् ॥३॥

परिभाषेयं गोलीयरेखागणितस्य तृतीयप्रतिज्ञानुरूपिणी। तद्वदेव साध्येति।

वृत्तयोर्यो भवेत् कोणो गोलपृष्ठे सदाल्पकः।
समकोणद्वयेनात्र स भवेदिति चिन्तयेत् ॥४॥

गोलीयरेखागणितस्य तृतीयप्रतिज्ञाया द्वितीयानुमानानुरूपैव इयं परिभाषा।

अन्या संज्ञा तु सिद्धान्तोक्तैवबोध्या बुधैरिह।
ततोऽथ वक्ष्ये गोलीयचापक्षेत्रगुणान् स्फुटान् ॥५॥

इति परिभाषाः।

प्रथमा प्रतिज्ञा

गोलपृष्ठे ययोर्योगौ वृत्तयोस्तद्भवौ सदा।
कोणौ समौ विदा ज्ञेयौ चापक्षेत्रवरेण च ॥१॥

गोलीयरेखागणितस्य तृतीयप्रतिज्ञाया द्वितीयानुमानेनास्या उपपत्तिर्बोध्या।

द्वितीया प्रतिज्ञा

गोलीयचापत्रिभुजे मिथः सम्मुखगे हि ये।
ते समे विदुषा ज्ञेये मिथो गोलविदा सदा ॥२॥

गोलपृष्ठे यैर्महद्वृत्तैस्त्रिभुजमुत्पन्नं तैरेव सम्मुखभागेऽन्यत्तादृशमेव त्रिभुजं भवेत्। यतो हि महद्वृत्तानां षड्भान्तरे पुनः सम्पातात्, तथा वृत्तद्वयोत्पन्नकोणस्य च सर्वत्र साम्यात् (वि. गो. क्षे. १)।

तृतीया प्रतिज्ञा।

खनागेन्दुमितैरंशैरल्पः कोऽपि भुजो भवेत्।
गोलपृष्ठोद्भवे त्र्यस्रे कोणोऽल्पोऽपि सदैव हि ॥३॥

अस्या उपपत्तिर्गोलीयरेखागणितस्याऽष्टमपरिभाषया तथा तस्यैव चतुर्दशक्षेत्रेणातिस्पष्टा। वस्तुतस्तु वृत्तयोः सम्पातस्य भार्धान्तरितत्वात्। त्रिज्यावृत्तत्रयेण गोलोपरि गोलीयत्रिभुजस्य सद्भावादियं परिभाषैव भवितुमर्हति।

चतुर्थी प्रतिज्ञा।

रेखागणितप्रथमाध्याये यः स्याच्चतुर्थो हि।
साध्यः सोऽपि यथार्थो गोलत्रिभुजे भवेद्विद्वन् ॥४॥

प्रथमचापीयत्रिभुजस्य द्वितीयचापीयत्रिभुजोपरि निवेशनेन सर्वथा मेलनं स्यादन्यथा षड्भान्तरे पुनः संयोगाभावः स्यात्। अत्रोपपत्तिः प्रथमाध्यायचतुर्थक्षेत्रवत्परिभावनीयेति।

पञ्चमी प्रतिज्ञा।

समद्विबाहुत्रिभुजे भूमिलग्नौ समौ विदा।
ज्ञेयौ कोणौ बहिःस्थौ वाऽन्तरस्थौ सर्वदेह वै ॥५॥

आधारान्तः कोणसाम्यविधाने गोलीयरेखागणितपञ्चमप्रतिज्ञया सर्वं सुगमम्। बहिःस्थकोणसाम्यकरण आधारान्तः कोणोनसमकोणद्वयस्य साम्यमिति नियमात्सर्वमुपपन्नं भवति।

षष्ठी प्रतिज्ञा।

प्रथमाध्यायजनिताः प्रतिज्ञा यास्तथेह वै।
ऋजुक्षेत्रमितेः षट् सप्ताष्टाङ्काभ्रेन्दुसंमिताः ॥६॥

अत्रोपपत्तिरपि रेखागणितप्रथमाध्यायस्य ६,७,८,९,१०, प्रतिज्ञावद्वोध्येति।

सप्तमी प्रतिज्ञा।

वृत्ते तत्रस्थिताद्बिन्दोर्लम्बः कार्यः सुगोलवित् ॥७॥

यथा उन्मण्डले वर्तमानाद् ध्रुवबिन्दोस्तत्रैववृत्ते लम्बो विधेयोऽस्ति।

अत्रोपपत्तिः—

ध्रुवान्नवत्यंशान्तरे पूर्वस्वस्तिकं तस्मान्नवत्यंशेन विहितवृत्तं याम्योत्तरमुन्मण्डले लम्बः स्यादिति याम्योत्तरवृत्तादुभयत्रोन्मण्डले नवत्यंशमितकोणसाम्यात् (वि. गो. क्षे. ३)।

अनुमानम्—

वृत्ते यो लम्बः सपृष्ठीयकेन्द्रे याति।

अत्र युक्तिः— पृष्ठीयकेन्द्रगतस्यैव वृत्तस्य तद्वृत्ते लम्बत्वादिति।

अष्टमी प्रतिज्ञा।

त्र्यस्रे भूलग्नकोणौ चेत् समकोणौ तदा सदा।
भुजौ भवेतां सततं तुल्यौ खाङ्कांशसम्मितौ ॥८॥

अत्रत्यसप्तमक्षेत्रानुमानादस्याः उपपत्तिः स्पष्टा।

नवमी प्रतिज्ञा।

चापजात्ये यदा कोटिः खनन्दांशाल्पिका भवेत्।
तदा कर्णोऽपि सततं नवत्यंशाल्पको भवेत् ॥९॥

अस्या उपपत्तिर्गोलीयरेखागणितस्य पञ्चदशक्षेत्रेण स्पष्टा। परन्तु केवलकोटिनवत्यंशाल्पत्वे कर्णस्य नवत्यंशाल्पत्वं न युक्तं भुजस्यापि तथात्वे सत्येव। अन्यथा भुजस्य नवत्यधिकत्वे कोटेस्तदल्पत्वेऽपि कर्णमानं नवत्यल्पं न।

अथ दशमी प्रतिज्ञा

चापजात्ये यदा कोटिः खाङ्कांशानधिका भवेत्।
तदा तत्सम्मुखाऽस्रोऽपि नवत्यंशाल्पको भवेत्॥१०॥

गोलीयरेखागणितचतुर्दशक्षेत्रानुरूपोपपत्तिरत्र।

एकादशी प्रतिज्ञा।

चापजात्ये यदा कोटिः खनिध्यंशाल्पिका भवेत्।
तदा श्रुतिः सदास्तीह कोटितोऽनल्पिका मता॥११॥

अत्रोपपत्तिः-

भुजांशविषुवांशक्रान्त्यंशेति चापजात्ये, भुजांशविषुवांशरूपकर्ण-कोटिसाम्यकल्पने क्रान्त्याधारगतकोणौ प्रत्येकं समकोणौ (वि. गो. क्षे. ५) परमेतत्पदान्त एव भवति। अन्यत्र नातो भुजांशविषुवांशौ समौ न। विषुवांशतो भुजांशाल्पकल्पने भुजांशक्रान्त्यंशोत्पन्नकोणमानं समकोणतोऽधिकम् (गो. रे. क्षे. ६)। अतस्तस्मात्समकोणकारिवृत्तेन समकोणतुल्यः कोणः पृथक्कार्यः। तद्वृत्तं च विषुवांशचाप एव निपतेत्। तस्मात्तत्संपातो ध्रुवप्रोतवृत्तस्य पृष्ठकेन्द्रं स्यात्। (वि. गो. क्षे. ७ अ.)। परमेतदसम्भवं पृष्ठीयकेन्द्रस्य तद्वृत्तान्नवत्यंशान्तरे स्थितत्वादत्र तु तदल्पे। अतो विषुवांशाद्भुजांश-मानमधिकमेवेति।

द्वादशी प्रतिज्ञा।

वृत्तद्वययोगजो भवेत् कोणस्तत्परमान्तरं भवेत्।
परमांतरदूरतोऽन्तरं स्वल्पं तन्निकटान्तराद् भवेत्॥१२॥

यथाऽत्र कल्प्यतां नाडीक्रान्तिवृत्तयोः परमान्तरं जिनांशा अयनप्रोतवृत्ते। राशिद्वयक्रान्ति र्ध्रुवप्रोत्तवृत्ते एकराशिक्रान्तिश्च भिन्नध्रुवप्रोतवृत्ते। अत्र जिनांशतोऽल्पा राशिद्वयक्रान्तिस्ततोऽपि स्वल्पैकराशिक्रान्तिर्भवेदिति।

अत्रोपपत्तिः-

अत्र क्रान्तिसाधनार्थमनुपातो यदि द्युज्यया परमाल्पद्युज्या लभ्यते तदा भुजज्यया किमिति लब्धं क्रान्तिज्या। अनुपातेऽत्र भाज्यस्थभुजज्याया उत्तरोत्तरं

न्यूनत्वे द्युज्यारूपहरस्योत्तरोत्तरमधिकत्वे भाज्यस्थस्य परमाल्पद्युज्यागुणस्य च स्थिरत्वे लब्धिरूपक्रान्तिज्याया न्यूनत्वमिति यथोक्तं सर्वमुपपन्नम्।

अथ त्रयोदशी प्रतिज्ञा।

यथा यथा भवेत्कोटिरधिका चापजात्यके।
तत्संमुखगतः कोणोऽधिकः स्याद्धि तथा तथा॥१३॥

यथाऽत्रकल्प्यताम् मेषवृषभान्तर्गतध्रुवप्रोतवृत्तकरणेन मेषान्तविषुवांशतो वृषभान्तविषुवांशानामधिकत्वान्मेषान्तीयध्रुवप्रोतक्रान्तिवृत्तोत्पन्नकोणतो वृषान्तीयध्रुवप्रोतक्रान्तिवृत्तोत्पन्नकोणमानमधिकं भवेत्।

अत्रोपपत्तिः–

द्युज्यापरमाल्पद्युज्याभुजकोटिज्येति चापीयजात्येऽनुपातेन ध्रुवप्रोतक्रान्तिवृत्तोत्पन्नकोणमानं साध्यते, यदि द्युज्यया त्रिज्या लभ्यते तदा परमाल्पद्युज्यया किमिति सैव लब्धा कोणज्या मेषान्तवृषान्तध्रुवप्रोतोत्पन्नचापजात्यद्वयेऽनुपातस्वरूपे भाज्यः स्थिरस्तथा च हारस्वरूपाद्युज्यायाअधिकत्वे मेषान्तीयकोणमानाद् वृषान्तीयद्युज्याया न्यूनत्वे तत्रत्यकोणमानमधिकमित्यनुपातस्वरूपदर्शनात्स्पष्टम्। इत्युपपन्नम्।

चतुर्दशी पञ्चदशी च प्रतिज्ञे।

लघुदोःसम्मुखास्रः स्यादल्पः सम्मुखकोणतः।
बृहद्भुजस्य सततं चापजातत्रिबाहुके ॥१४॥
लघ्वस्राभिमुखो बाहुरल्पः स्याद्बाहुतः सदा।
सम्मुखाद्बृहदस्रस्य चापजातत्रिबाहुके ॥१५॥

अनयोरुपपत्तिः–

गोलीयरेखागणितस्य नवमक्षेत्रानुसारिणी बोध्येति।

अथ षोडशी प्रतिज्ञा।

तृतीयभुजमानात् स्यादधिका गोलपृष्ठगे।
चापीयत्रिभुजे विद्वन्! भुजद्वययुतिः सदा॥१६॥

गोलीयरेखागणितस्य सप्तमक्षेत्रानुरूपाऽस्या उपपत्तिरिति। अत्रनतांश-

लम्बांशद्युज्याचापांशेत्यवयवत्रये चाप त्रिभुजे द्युज्याचापांश मानस्य सर्वाधिक कल्पनेऽपि नतांशलम्बांशयोगस्तस्मादधिक एव। वर्धितद्युज्या-चापांशे नतांशमितं छित्वा तत्रखमध्यप्रोतवृत्तं कार्यम् ततश्च तत्रत्यपञ्चदशक्षेत्राभ्यां गोलविदामतिरोहितैवोपपत्तिरिति।

अथ सप्तदशी प्रतिज्ञा।

चापीयत्रिभुजे या स्याद् युतिः सर्वभुजोद्भवा।
साल्पा स्याद् भगणांशेभ्यो विज्ञेयेति विदा सदा ॥१७॥

अस्या उपपत्तिर्गोलीयरेखागणिताष्टमक्षेत्रवत्स्पष्टेति।

अथ अष्टादशी प्रतिज्ञा।

एकविंशतिसंख्याकप्रतिज्ञार्धं तथेह वै।
आद्याध्याये सदा रेखागणितस्य भवेत् सुवित् ॥१८॥

यथाऽत्रकल्प्यताम्। खमध्यादागतयोः कोणवृत्तयोर्नाडीवृत्ते यत्र सम्पातौ तत्र तत्र ध्रुवप्रोतवृत्ते विधेये। एवं सति कोणवृत्तद्वयनाडीवृत्तोत्पन्नमन्तस्त्रिभुजं तथा च ध्रुवप्रोतवृत्तद्वयनाडीवृत्तोत्पन्नं बहिर्गतत्रिभुजम्। ततः परं वासना प्रथमाध्यायैकविंशतिप्रतिज्ञावदिति।

अथ एकोनविंशी प्रतिज्ञा।

कोणोनभार्धतुल्याः स्युर्भुजा यस्मिन् त्रिबाहुके।
भुजोनभार्धतुल्याः स्युः कोणास्तत्र विदा सदा ॥१९॥

गोलीयरेखागणितस्यैकादशक्षेत्रानुरूपेयं प्रतिज्ञा। अतस्तद्वासनावदस्या अपि बोध्येति।

विंशी प्रतिज्ञा।

कोणत्रयाणां योगः स्यात् समकोणद्वयाधिकः।
षट्समास्त्वाल्प एव स्याद् गोलीयत्रिभुजे सदा॥२०॥

गोलीयरेखागणितद्वादशक्षेत्रानुरूपाऽस्या उपपत्तिरिति।

एकविंशी प्रतिज्ञा।

कोणद्वययुतिस्त्र्यस्रे समकोणद्वयाधिकात्।
तृतीयास्राद् भवेदल्पा गोलचापोद्भवे सदा॥२१॥

इति महामहोपाध्यायविशेषाभिधश्रीसुधाकरद्विवेदिरचित गोलीयरेखागणितं समाप्तम्।

चापीयत्रिभुजे कोणद्वययोगः समकोणद्वयसहिततृतीयकोणादल्पः स्यात्।

अत्रोपपत्तिः।

चापीय स्पर्धिक्षेत्रे प्रथमभुजमानम्=१८०–प्रको (वि.गो.क्षे. १६)। द्वि.भु.=१८०–द्विको। तृभु=१८०–तृ.को.। भुजद्वययोगस्तृतीयभुजादधिकोऽतः प्रभु+द्विभु> तृभु। तस्मात् (१८०–प्रको+१८०–द्वि.को.)> (१८०–तृको) =३६०–(प्रको+द्विको) > १८०–तृको। समशोधनादिना ३६०–१८०> (प्रक+द्विको–तृको)। वा १८०+तृको> (प्रको+द्विको)। अत उपपन्नं सर्वम्।

विद्वद्वरश्रील सुधाकराणां
गोलीयरेखागणिते निबद्धः।
मीठादिलालेन विबोधनाय
संकेतमार्गः परिपूर्तिमागात् ॥१॥

इति 'श्रोत्रिय' कुलावतंस पं.श्रीसीताराम शास्त्री
आत्मज डॉ. भास्कर शर्मा 'श्रोत्रिय'
विरचित शची नामक टीकान्तर्गत
गोलीयरेखागणित समाप्त।

* इति शम् *

अथ गोलीयरेखागणितसम्बन्धिनः प्रश्नाः।

१. निर्दिष्टचापस्य समानं भागद्वयं विधेयम्? (रे.ग. ३/२९)
२. निर्दिष्टगोलीयकोणस्य समानभागद्वयं कथं क्रियते ?
३. निर्दिष्टमहच्चापादिष्टचापसमं खण्डं कर्तव्यम्।
४. गोलबहिर्गताद्बिन्दोर्गोलस्पर्शरेखा कथं विधीयते ? (रे.ग. ३/१६)
५. चापीयत्रिभुजोपरि वृत्तं विरच्यताम्। (गो.रे. १)
६. चापीयत्रिभुजान्तर्वृत्तं कर्तव्यम्। (रे.ग. ४/४)
७. गोलोपरि चापीयवर्गक्षेत्रं भवति न वा?
(भुजांशचापोभयपार्श्ववर्तचापीयजात्यद्वययोगोत्पन्नचतुर्भुजाद्वर्गक्षेत्राभाव-स्थितिः स्पष्टा।
८. चापीयचतुर्भुजोपरि वृत्तं निर्मातुं शक्यं किम्?
९. यदि गोलो गोलेन छिद्यते तदा छेदनप्रदेशः किमाकारः? (गो.रे.१)
१०. गोलीयवृत्तस्य पृष्ठीयकेन्द्रमन्विष्यताम्। (गो.रे. १/६ अनु)
११. एकस्मिन् बिन्दौ सम्मिलितवृत्तैरुत्पन्नकोणयोगः कियान्?
१२. गोले कोणमापन कथं क्रियते? (गो.रे. ३)
१३. गोले वृत्तेन वृत्तमर्धितं भवतीति कथम्? (गो.रे. १/१ अनु)
१४. गोले समत्रिबाहुकं कथं विरच्यते? (रे.ग. १/१)
१५. गोले समत्रिकोणकमपि भवति किम्? (गो. रे. ६)
१६. गोलीयत्रिभुजे सर्वकोणयोगः कियत् परिमाणः ? (गो.रे. १२)
१७. निर्दिष्टचापस्य निर्दिष्टबिन्दूपरि निर्दिष्टकोणसमानः कोणः कर्तव्यः।
१८. गोलीयजात्ये भुजवर्गोनकर्णवर्गः कोटिवर्गः स्यात् किम्?
१९. रेखागणितस्य प्रथमाध्यायस्य सप्तमक्षेत्रं गोल युक्त्या साध्यताम्।
२०. लघुमहद्वृत्तयोः सम्पातान्तर्गते लघुमहद्वृत्तीयचापेऽशांत्मना समे किम्?
२१. गोलीयबहुभुजक्षेत्रेऽन्तःकोणयोगः साध्यताम्।
२२. गोलीयबहुभुजक्षेत्रे भुजयोगो भांशतोऽधिको भवति न वा?

हंसा प्रकाशन, जयपुर

Designed By- PinkCity Graphics (Reena)